thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 01 मार्च 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 01 मार्च 2015 से 07 मार्च 2015

फा.शु. 11 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 146, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्यसमाज डी.ए.वी. सोनीपत में पुरस्कार-वितरण

आर्यसमाज डी.ए.वी. मल्टीपर्पज. पब्लिक स्कूल सै.–15 के तत्वावधान में ''वैदिक–ज्ञान–बाल–प्रतियोगिता'' का आयोजन किया गया। प्रतियोगिता जिलास्तर पर सभी विद्यालयों के लिए आयोजित की गई थी जिसमें जिले के 23 विद्यालयों के लगभग 2600 परीक्षार्थियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। प्रतियोगिता में निरीक्षक से लेकर केन्द्र अधीक्षक के रूप में आर्यसमाजों के सदस्यों ने निष्ठापूर्वक अपना योगदान दिया।

सफल प्रतिभागियों को पुरस्कृत करने के लिए डी.ए.वी. स्कूल सोनीपत के सभागार में ''पुरस्कार वितरण समारोह'' का आयोजन किया गया। समारोह का आरम्भ यज्ञशाला में सम्पन्न यज्ञ से हुआ। मुख्य अतिथि श्री एस.के. शर्मा, (महामंत्री,आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के अतिरिक्त श्री बलदेव जिन्दल, (कोषाध्यक्ष, आर्यप्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली) तथा श्री के.एल. खुराना, (प्रधान आर्यप्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा हरियाणा) विशेष अतिथि थे। इस अवसर पर मुख्य वक्ता के रूप में दिल्ली विश्वविद्यालय से आये हुए डॉ. महेश विद्यालंकार जी ने अपने प्रवचन से दर्शन किया। आचार्य संदीप दर्शनाचार्य व विद्यालय प्रबन्धक समिति के चेयरमैन श्री इन्द्रजीत बत्रा जी विशेष रूप से उपस्थित थे।

विद्यालय की छात्रा वृद्धि सैनी व ऋत्विजा ने अपने भजनों के माध्यम से समारोह के वातावरण को संगीतमय बना दिया। मुख्य अतिथि श्री एस.के.शर्मा ने उपस्थित जन समुदाय को सम्बोधित करते हुए डी.ए.वी. स्कूलों, कॉलिजों के द्वारा वेदों के प्रचार प्रसार के लिए किए जा रहे प्रयासों का विस्तृत विवरण दिया। उन्होंने आर्य समाज को इन संस्थाओं का जनक बताते हुए उसे एक ऐसा वटवृक्ष बताया जो डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति नई दिल्ली के प्रधान श्री पूनम सूरी जी के संरक्षण में फलफूल रहा है।

प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार की विजेता हिन्दू कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय की सोनाली ने लैपटॉप डी.ए.वी. स्कूल सै. 15 से अग्निव्रत ने द्वितीय स्थान प्राप्त कर डिजिटल कैमरा तथा ओम पब्लिक स्कूल गोहाना से अभिषेक ने तृतीय स्थान पर रह कर साइकिल प्राप्त की। प्रतियोगिता का ''चल–विजयोपहार'' हिन्दू कन्या वरिष्ठ मा. विद्यालय को प्राप्त हुआ। अंत में विद्यालय के चेयरमेन इन्द्रजीत बत्रा ने उपस्थित जन समुदाय को धन्यवाद देते हुए सभी का आभार व्यक्त किया शांति पाठ के साथ समारोह का समापन किया गया।

डी.ए.वी. द्वारका (दिल्ली) में हुआ वैदिक यज्ञ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका में नववर्ष का प्रारम्भ वैदिक परम्परानुसार हवन यज्ञसे किया गया जिसमें सभी के लिए सुखद एवं मंगलमय जीवन जीने की प्रार्थना की गई। इस अवसर पर विद्यालय के समस्त सदस्यों एवं दात्रों ने हवन कुण्ड में आहुतियाँ देते हुए स्वस्ति वाचन के मन्त्रों का पाठ किया। इस यज्ञ की मुख्य यजमाना प्राचार्या श्रीमती मोनिका मेहन जी थी। प्राचार्या जी ने उद्बोधन स्वरूप परमपिता परमात्मा के यहाँ पुण्य का खाता खोलने की प्रेरणा देते हुए कहा कि – ''जैसे हम अपने अर्जित धन को बैंक में रखते हैं, उसी प्रकार हमारे द्वारा किए गए कर्मों में से कुछ संचित कर्म बन जाते हैं। अपने उन शुभ कर्मों से समाज का कल्याण करते हुए पुण्यों को संग्रहीत करना चाहिए। हम सभी प्रण लेना है कि हम अपने खाते में अधिकाधिक शुभ कर्मों का निवेश करेंगे।''

शान्ति पाठ के पश्चात प्रसाद वितरण कर कार्यक्रम का समापन हुआ।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सैक्टर-14 गुडगाँव ने आयोजित किया दीक्षांत समारोह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सैक्टर–14, गुडगाँव के तत्वाधान बोर्ड परीक्षा में बैठने होने जा रहे बारहवीं कक्षा के छात्रों को दीक्षा व नामांकन पत्र प्रदान करने हेतु वैदिक परंपरा के अनुसार इक्कीस कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया।

विद्यालय के अध्यक्ष, डी.ए.वी. प्रबंधर्त्री समिति के उपप्रधान श्री प्रबोध महाजन जी, विद्यालय के प्रबंधक श्री आर.आर. भल्ला जी तथा भूतपूर्व प्राचार्या श्रीमती अनिता मक्कड़ जी के सान्निध्य में समारोह गरिमापूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ।

इस समारोह में श्री प्रबोध महाजन जी के द्वारा छात्रों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए परीक्षा की तैयारी हेतु सुझाव भी दिए गए। विद्यालय की प्राचार्या जी श्रीमती अपर्णा एरी जी ने अपने भावपूर्ण वक्तव्य तथा भविष्यगामी योजना हेतु शुभकामनाएँ प्रदान कीं तथा छात्रों के शैक्षिक कौशल व अन्य गतिविधियों संबंधी पुरस्कार भी वितरित किए गए। राष्ट्रगान के साथ यह दीक्षांत समारोह सफलतापूर्वक सफल हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 01 मार्च, 2015 से 07 मार्च, 2015

हे सोम! हृदय-कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरितातिं पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।
ऋग् ९.७०.९

ऋषिः रेणुः वैश्वामित्रः। देवता पवमानः सोमः। छन्दः जगती।

● (सोम) हे सोम परमात्मन्! (तू), (वृषा) वर्षक (होता हुआ), (देववीतये) दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, (पवस्य) प्रवाहित हो, (इन्द्रस्य) आत्मा के, (हार्दि) हृदय-रूप, (सोमधानं) सोम-कलश में, (आविश) प्रविष्ट हो।, (बाधात्) बाधे जाने से, (पुरा) पहले, (नः) हमें, (दुरिता अति) पापचरणों से लंघाकर, (पारय) पार करदे। (क्षेत्रवित्) मार्ग का ज्ञाता, (विपृच्छते) विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, (दिशः) दिशाओं को, (आह हि) बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करने वाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय-रूप सोम-कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम-पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी-कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप-भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप-कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप-मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप-ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार-रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछने वाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा-ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन-पोत भव-सागर में डूबकर नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

एक ही रास्ता

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में बात हो रही थी कि चार गुण हों तो गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना चाहिए, न हों तो नहीं होना चाहिए। पहला गुण है—शरीर का स्वस्थ और शक्तिशाली होना, शरीर में शक्ति होना। दूसरा गुण है—विशाल हृदय वाला होना। तीसरा गुण है—अच्छी मेधा वाला होना। चौथा गुण है—हमेशा प्रसन्न रहना। ये चार गुण जिनके अंदर हों, केवल उन्हीं को गृहस्थी बनने का अधिकार है।

वेद भगवान् स्पष्ट शब्दों में कहता है, "ओ कमाने वाले सुन! अकेले नहीं खाना। तेरी इस कमाई पर केवल तेरा ही अधिकार नहीं, सारे समाज का अधिकार है। इस देश के अन्न, पानी, मिट्टी से बना है तेरा धन, सारे देश को अधिकार है इस पर।"

यह थी वेद की आज्ञा। परंतु जब यह अवस्था नहीं रही तब? तब क्या हुआ?

कम्यूनिज़्म जाग उठा। कम्यूनिज़्म मनुष्य को सुखी नहीं करेगा। सोशयलिज़्म भी नहीं करेगा। जैसा समाज आज बन रहा है, उसमें दान-पुण्य समाप्त हो जाएगा। लोग समाजवाद से पूंजीवाद की ओर, पूंजीवाद से समाजवाद की ओर बढ़ते हैं। वास्तव में दोनों गलत हैं। परंतु आज जो गलत संस्था उत्पन्न हुई है, इसका उत्तरदायित्व किस पर है—जिन्होंने धन को अपना देवता बना लिया।

अब आगे...

अब स्वः की बात सुनो। स्वः का अर्थ है, "ऐ प्रभो! मुझे सुख दे।" अच्छी प्रार्थना है यह। अवश्य करनी चाहिए। परन्तु इसके साथ यह भी तो प्रयत्न होना चाहिए कि मैं भी किसी को सुख दूँ। यदि मैं किसी को सुख नहीं देता, यदि मैं दूसरों के कष्ट को दूर नहीं करता और केवल भगवान् से ही सुखों की याचना करता हूँ तो याद रखो, यह याचना कभी नहीं मानी जायेगी। अरे, जाना चाहते हो बम्बई, चढ़ बैठे हो उस गाड़ी में जो अमृतसर जाती है, तो बम्बई में पहुँचोगे किस प्रकार?

हमारे शास्त्रों ने कहा, "उठो, बढ़ो! ऐसा स्थान खोजो सुन्दर मकान बनाने के लिए, जहाँ रोग न हों, व्याधियाँ न हों।" हमने समझा कि मकान बनाने का अर्थ केवल पैसा कमाना है। अफ्रीका में बहुत-से भारतवासी रहते हैं। अफ्रीका के बहुत-से भागों में बहुत हरियावल है; व्यापार के बहुत साधन हैं। जो लोग भी वहाँ गए हैं वे अधिकांश पैसा कमाने के लिए गए। वहाँ उन्होंने मकान भी बना लिये। परन्तु अफ्रीका की हरियावल से स्थास्थ्य नहीं, व्याधियाँ निकलती हैं। सौ में से डेढ़ सौ हिन्दुस्तानी वहाँ बीमार हैं। मेरा तात्पर्य यह है कि कई लोगों को दो-दो बीमारियाँ हैं। अब सोचिए कि वहाँ जाकर क्यों बना लिया उन्होंने मकान? वेद ने तो ऐसा मकान बनाने के लिए नहीं कहा। वह तो कहता है ऐसा स्थान ढूँढो जो स्वास्थ्य देने वाला हो। ऐसा मकान बनाओ जिसके हर कमरे में सूर्य की धूप आती हो। ऐसा आपने किया नहीं, अब रोने और चिल्लाने से क्या होगा? रोओ नहीं। रोने से, चिन्ता करने से, हर समय चिन्तित रहने से आयु घटती है, बढ़ती नहीं। जो बहुत चिन्ता करता है, उसके बाल असमय में ही सफेद हो जाते हैं। यह मेरा बच्चा बैठा है रणवीर, फाँसी की कोठरी में था यह, तो मैं प्रतिदिन इनके पास जाया करता था इसको उपनिषद् सुनाने, भगवान् का रूप बताने और आत्मकल्याण का मार्ग दिखाने के लिए। जिस कोठरी में था यह, उसके सामने वाली कोठरी में एक नौजवान था। उसको भी फाँसी के दण्ड की आज्ञा थी, परन्तु अभी अपील की हुई थी। आशा थी उसके दिल में। काफी स्वस्थ और बलवान् नवयुवक था वह। मौज में आकर गाया करता था—

तू बख़्श गुनाह हुण मेरे,
मैं खादे कुक्कड़ तेरे।

परन्तु अन्त में वह दिन आया, जब उसकी अपील अस्वीकार हो गई। उससे एक दिन पूर्व उसे मैंने देखा था, हँसता हुआ, चमकता हुआ चेहरा, स्याह काले बड़े-बड़े बाल, भरी हुई काली दाढ़ी। दूसरे दिन उसकी कोठरी की ओर देखा तो एक बूढ़ा वहाँ बैठा था, पीला चेहरा, सफेद

thearyasamaj.org

दाढ़ी, सिर के बाल भी सफेद, चुपचाप जैसे बेहोश हो गया हो। मैंने जेलवालों से पूछा, “कल जो क़ैदी यहाँ था, वह कहाँ गया?” उन्होंने बताया, “यही वह क़ैदी है। कल इसकी अपील अस्वीकार हो गई। एक ही रात में इसके बाल सफेद हो गए।”

यह है चिन्ता का परिणाम! और यहाँ किसी को भी पूछकर देखिये, सबको कोई–न–कोई चिन्ता है। हाँ, बम्बई में एक बार एक माँ को मैंने देखा, उसे अद्भुत चिन्ता थी। सेठ शूरजी बल्लभदास के सुपुत्र श्री प्रताप शरजी ने चारों वेदों के मन्त्रों से भारी यज्ञ किया। बहुत बड़े सेठ हैं। सेठ के अतिथि भी तो सेठ ही होते हैं। उन्हीं में से एक माता थी, बहुत चिन्तावाली। मैंने पूछा, “माँ! तुम्हें किसी बात की चिन्ता है?” वह बोली, “मुझे यह चिन्ता है कि मुझे कोई चिन्ता नहीं।”

अब बताइए! ऐसे लोगों का कोई क्या करे?

वेद कहता है कि सदा प्रसन्न रहो। जो प्रसन्न नहीं रहता, उसे गृहस्थ–आश्रम में प्रविष्ट होने का, उसमें रहने का कोई अधिकार नहीं। मैं एक बार एबटाबाद में गया। एक सज्जन के यहाँ ठहरा। उनका नाम नहीं लूँगा। मेरा स्वभाव है बच्चों के साथ खेलना। उनके भी बच्चे थे। दिनभर मैं उनके साथ खेलता रहा। श्रीमान् दफ्तर गए हुए थे। दिनभर घर के अन्दर हँसी के ठहाके गूँजते रहे; परन्तु जैसे ही साढ़े चार बजे, वैसे ही एक बच्चे ने कहा, “अरे, पिता जी के आने का समय हो गया!” दूसरे ने कहा, “समय क्या, सामने सड़क पर तो आ रहे हैं वे! जल्दी से एक बच्चा सोफे से नीचे जा छुपा, एक पलँग के नीचे घुस गया, एक मेज़ के नीचे चला गया, हर ओर सन्नाटा छा गया। श्रीमान् जी बड़े रौब से आए। सामने वाली कुर्सी पर बैठ गए। मैंने कहा, ”भाई, तुम्हारे बच्चे तुमसे इतना क्यों डरते हैं? वह देखो, तुम्हें आता देखकर एक मेज़ के नीचे जा छुपा है, एक सोफे के पीछे दुबका पड़ा है, एक पलँग के नीचे घुस गया है।” बच्चे अपनी पोल खुलने पर निकलकर भागे। मैं हँस उठा। वे श्रीमान् जी मुस्करा भी नहीं सके; बोले, “मैं घर में तनिक रौब से रहता हूँ, इससे घर का डिसिप्लिन ठीक रहता है। मैंने कहा, “तुम्हारा यह घर है या सेण्ट्रल जेल? यह क्या रौब जमा रखा है तुमने कि तुम आओ और बच्चों के प्राण सूख जाएँ? अरे, होना यह चाहिए कि तुम आओ और बच्चे तुमसे चिपट जाएँ। कोई सिर पर चढ़ जाए, और कोई हाथ पकड़ ले, कोई कन्धे पर बैठे। ऐसा करने से तुम्हारा भी रक्त बढ़ेगा, बच्चों का भी।”

इसलिए वेद कहता है, “प्रसन्न रहो।” परन्तु कुछ लोगों से पूछिए, “रोते क्या हो?” तो वे कहते हैं, “शक्ल ही ऐसी है।” अब जिनकी शक्ल ही ऐसी है, उनके लिए क्या कहूँ! कुछ लोग कहते हैं कि “आनन्द स्वामी! तू चला गया है घर–बार छोड़ के गंगोत्री, हम रहते हैं दिल्ली में। यहाँ कभी यरकान (पीलिया), कभी भरकान, कभी वोट, कभी खोट। हमको पूछ के देख, चिन्ता के बिना निर्वाह नहीं।” मैं कहता हूँ निर्वाह है। कोई दुःख और कष्ट हो तो उसे दूर करने का यत्न करो अवश्य, फिर फल को भगवान् पर छोड़ दो। हर समय चिन्ता में डूबे मत रहो और सच्चाई को मत भूलो कि–

या खून पसीना करके बहा,
या तान के चादर सोता जा।
यह नाव तो चलती जाएगी,
तू हँसता रह या रोता जा।।

यह क्या हुआ कि करो–कराओ कुछ नहीं, बस चिन्ता करते रहो। याद रखो, जो दुःख तुमने स्वयं उत्पन्न किए हैं, उन्हें दूर करने का यत्न भी तुम्हें स्वयं करना होगा; शेष जो तुम्हारे बस में नहीं, उसके लिए भगवान् से प्रार्थना करोगे तो दुःख दूर होंगे अवश्य। दुःखों से घबराओ नहीं।

यह क्या हुआ कि करो–कराओ कुछ नहीं, बस चिन्ता करते रहो। याद रखो, जो दुःख तुमने स्वयं उत्पन्न किए हैं, उन्हें दूर करने का यत्न भी तुम्हें स्वयं करना होगा; शेष जो तुम्हारे बस में नहीं, उसके लिए भगवान् से प्रार्थना करोगे तो दुःख दूर होंगे अवश्य। दुःखों से घबराओ नहीं। महाभारत के युद्ध के बाद कृष्ण भगवान् जब द्वारका जी को वापस जाने लगे तो कुन्ती से बोले, “माँ! कोई और भी सेवा है क्या?” कुन्ती बोली, “हाँ भगवन्! ऐसी कृपा करो कि हम पर कष्ट–क्लेश आते ही रहें।” कृष्ण भगवान् ने पूछा, ऐसी बात क्यों माँगती हो?” कुन्ती ने कहा, “जब जब कष्ट आता है तब–तब ही आपके दर्शन होते हैं, इसलिए कहती हूँ, कष्ट आते ही रहें तो अच्छा है।” दुःखों से घबराओ नहीं। याद रखो, वह सब–कुछ देखनेवाली माँ, वह महान् कृपावाली महाशक्ति, हर समय तुम्हें देखती है, हर समय तुम्हारे दुःखों को दूर करने के लिए तैयार है, पुकारकर कह–

महाभारत के युद्ध के बाद कृष्ण भगवान् जब द्वारका जी को वापस जाने लगे तो कुन्ती से बोले, “माँ! कोई और भी सेवा है क्या?” कुन्ती बोली, “हाँ भगवन्! ऐसी कृपा करो कि हम पर कष्ट–क्लेश आते ही रहें।” कृष्ण भगवान् ने पूछा, ऐसी बात क्यों माँगती हो?” कुन्ती ने कहा, “जब जब कष्ट आता है तब–तब ही आपके दर्शन होते हैं, इसलिए कहती हूँ, कष्ट आते ही रहें तो अच्छा है।” दुःखों से घबराओ नहीं। याद रखो, वह सब–कुछ देखनेवाली माँ, वह महान् कृपावाली महाशक्ति, हर समय तुम्हें देखती है, हर समय तुम्हारे दुःखों को दूर करने के लिए तैयार है, पुकारकर कह–

प्रभु आपकी हूँ मैं शरण,
निज चरण सेवक कीजिए।
मैं कुछ नहीं हूँ माँगता,
जो आप चाहें दीजिए।।
सिर आँख से मंजूर है,
सुख दीजिए दुख दीजिए।
जो है इच्छा कीजिए,
पर दूर न दर से कीजिए।।

पड़ा रहने दो अपने द्वार पर, धुल जाने दो आत्मा का मैल। पुकार के कहो– तुम ही सब–कुछ हो, तुम ही महान् हो।

इस प्रकार जो करता है, उसके दुःखों का नाश अवश्य होता है।

परन्तु मैं ‘स्वः’ की बात कर रहा था। ईश्वर सुखों को देने वाला है। सुख का अर्थ है, वह जिसकी इन्द्रियाँ अच्छी है। दुःख का अर्थ है, वह जिसकी इन्द्रियाँ बुरी हैं। अच्छी का अर्थ है इच्छा के अनुकूल और बुरी का अर्थ है इच्छा के प्रतिकूल। जिसकी इन्द्रियाँ वश में हैं वही सुखी है; जिसकी इन्द्रियाँ वश में नहीं, वह प्रत्येक अवस्था में दुःखी है, पराए वश में है, वह पराधीन है और–

पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।

हमारे प्राचीन ऋषि कहते थे, अपनी आवश्यकताओं को कम–से–कम रखो ताकि तुम्हें आवश्यकताओं के पूरा न होने से कष्ट न हो। आज हमने अपनी आवश्यकताओं को बढ़ाना ही अपना नियम बना लिया है। बढ़ाओ अपनी आवश्यकताओं को, परन्तु याद रखो, जितना बढ़ाओगे उतना ही दुःख पाओगे, उतना ही सुख से भी दूर होते जाओगे। एक बार हम लोग बम्बई में एक सज्जन के यहाँ दान माँगने गए। लाला मेहरचन्द जी महाजन जो पिछले दिनों भारत की सुप्रीम कोर्ट के चीफ़ जस्टिस थे, हमारे साथ थे। लाला मेहरचन्द जी प्रिंसिपल भी हमारे साथ थे; लाला साईंदास जी प्रिंसिपल भी थे। जिन सज्जन को हम मिलने गए, वह लाला साईंदास जी का शिष्य था। देर तक हम प्रतीक्षा करते रहे। वे ऊपरवाले कमरे से नीचे नहीं आए। हमने नौकर से पूछा, “साहब क्या कर रहे हैं?” वह बोला, “नेकटाई बाँध रहे है।” अब बताइए, यह नेकटाई की क्या आवश्यकता है? क्या अंग्रेजों से पहले भी इस देश में कोई नेकटाई पहनता था? अंग्रेज़ चला गया, अंग्रेज़ियत नहीं गई। आज भी कनाट–प्लेस में जाकर देखिए, सेट, मैट, केट, पता नहीं क्या–कुछ दिखाई देता है। बढ़ाए जाओ आवश्यकताओं को, परन्तु यह सुख का मार्ग तो नहीं है। इन्द्रियों को वश में रखना ही सुख है। उनका वश में न होना सुख का नहीं, सदा दुःख का कारण होता है। यदि तुम भगवान् से सुख चाहते हो, तो अपने लिए सुख पैदा करने का यत्न करो। यह है भूः, भुवः, और स्वः का अर्थ।

यह अर्थ जब समझ में आ जाए, ओ३म् का जाप हो जाए, तब आसन में बैठ जाओ। आसन का अर्थ शरीर की ऐसी दशा है, जिसमें आप बिना कष्ट के तीन–चार घण्टे या अधिक देर बैठे रह सकें। आसन में बैठकर, आँखें बन्द करके, माथे में जहाँ दोनों भौंहें मिलती हैं, वहाँ ध्यान लगाओ। योगी लोग उसे आज्ञाचक्र कहते हैं। कुछ लोग उसे त्रिवेणी भी कहते हैं, क्योंकि वहाँ गंगा, यमुना और सरस्वती आकर मिलती हैं, कुछ लोग उसे प्रयाग भी कहते हैं, क्योंकि वहाँ इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा का मिलाप होता है। पिछली बार प्रयाग में कुम्भ हुआ तो मैं भी वहाँ गया था। जिस भीड़ में सैंकड़ों आदमी कुचलकर मर गए, उनमें मैं भी था। भीड़ में फँस गया था। ऐसा ज्ञात हुआ कि बचूँगा नहीं। यदि मुझे कम्भक प्राणायाम करने की विधि पता न होती तो बचा भी नहीं, परन्तु बचा। दूसरे दिन एक सम्मेलन में भाषण भी दिया। उसमें कितने ही घायल भी उपस्थित थे। उनसे मैंने पूछा, “क्यों भाई, तुम्हें पीड़ा तो नहीं हुई, क्योंकि शास्त्रों में लिखा है कि जो व्यक्ति एक बार प्रयाग में नहा ले उसके जन्म–जन्म के दुःख कट जाते हैं, जन्म–जन्म की पीड़ा नष्ट हो जाती है?” वे बोले, “हमें तो पीड़ा होती है; शास्त्र गलत कहते हैं क्या?” मैंने हँसकर कहा, “शास्त्र गलत नहीं कहते, तुम गलत समझे हो। जिस प्रयाग की बात शास्त्र कहते हैं, वह यह इलाहाबाद का प्रयाग नहीं, अपितु यह माथे का प्रयाग है। दोनों भौंहों के मध्य में भृकुटि है जहाँ गंगा, यमुना, सरस्वती के रूप में इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा नाड़ियाँ आकर मिलती हैं। यहाँ जो स्नान कर लेता है, यहाँ ध्यान लगाकर जो भूः, भुवः, स्वः कहता है उसके सभी कष्ट और क्लेश दूर हो जाते हैं, उसके लिए कोई पीड़ा शेष नहीं रहती। परन्तु अब समय पूरा हो गया है, शेष कल। ओ३म् तत् सत्!

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

ईश्वर दर्शनों का विषय है

● इन्द्रजित देव

स्वामी रामतीर्थ जी जब अमरीका में गए थे तो वहाँ उनके प्रवचनों को सुनकर एक दिन श्रोताओं में से एक श्रोता ने भरी सभा में खड़े होकर प्रश्न किए–

"Is your God a Mister" अर्थात् जिस ईश्वर की चर्चा आप करते हैं क्या वह पुरुष है?

"No, our God is not a Mister" अर्थात् ईश्वर पुरुष नहीं है।

"Is your God is Misses" अर्थात् क्या ईश्वर एक (विवाहिता) स्त्री है।

"Our God is not a Misses" अर्थात् ईश्वर एक (विवाहिता) स्त्री नहीं है।

"Is your God a Miss?" अर्थात् क्या वह ईश्वर कन्या है?

"No, Our God is not a Miss" अर्थात् वह ईश्वर कन्या भी नहीं है।

"Your God is not a Mister, not misses and not a miss, then what is your God?" अर्थात् जिस ईश्वर की आप व्याख्यानों में चर्चा करते हैं, वह न तो पुरुष है, न स्त्री है तथा न ही वह कन्या है, वह यदि है तो क्या है?

"Our God is a Mystery" जिस ईश्वर की मैं चर्चा करता हूँ, वह एक रहस्य है।"

सचमुच ईश्वर एक गहरा रहस्य है। इसी कारण उसे समझने, जानने व मानने में गहरा पुरुषार्थ अपेक्षित है। यह अपेक्षित पुरुषार्थ न करने के कारण संसार में ईश्वर के अस्तित्व के प्रति अनास्था तथा उसके गुणों व कार्यों के प्रति अनभिज्ञता व्याप्त है। ऐसे लोगों को नास्तिक कहते हैं तथा जो स्वयं को आस्तिक घोषित करते हैं, वे लोग ईश्वर की व्यवस्था को गहरे व सच्चे मन से नहीं समझते। वे ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करने के बावजूद ईश्वर के अस्तित्व को सिद्ध नहीं कर पाते। ऐसे लोग अन्ध विश्वासी कहलाते हैं। नास्तिकों व अन्ध विश्वासियों की सेवा में एतदद्वारा हम ईश्वर के अस्तित्व विषयक कुछ तर्क, प्रमाण व युक्तियाँ प्रस्तुत करके उसकी रहस्यात्मकता से पर्दा हटाने का नन्हा–सा विनम्र प्रयास करते हैं।

सृष्टि के आरंभ से ही ईश्वर एक पहेली अथवा रहस्य बना रहा है, जिसे समझने में बड़े–2, मुनि, योगी व विचारक अपना शक्तिभर प्रयास करते आए हैं। वह पहेली या रहस्य इसलिए बना रहा है व बना रहेगा क्योंकि वह पाञ्चभौतिका सत्ता नहीं है। शरीरगत का विषय नहीं है। अत्यन्त सूक्ष्म व र्स्वव्यापक होने से कोई भौतिक साधन उसे प्रत्यक्ष नहीं करा सकता। आज विज्ञान नित्यप्रति उन्नति कर रहा है तथा नए–नए आविष्कार वैज्ञानिक कर रहे हैं, जो दृश्यमान व भौतिक ही हैं तथा आज के वैज्ञानिक भौतिक पदार्थों के ही कुछ रहस्यों को उजागर कर रहे हैं क्योंकि वैज्ञानिक भौतिकता तक ही सीमित हैं। अतः वे घोषणा करते हैं कि ईश्वर है ही नहीं क्योंकि वह प्रयोगशाला में सिद्ध ही नहीं होता। हमारे विचार में वैज्ञानिक को ईश्वर के विषय में निर्णय देने का अधिकार नहीं है। उनसे पूछा ही जाना नहीं चाहिए। ईश्वर संबंधी उनकी मान्यताएँ व घोषणाएँ अमान्य हैं। यह विषय दार्शनिकों का है तथा उन्हीं से पूछा जाना चाहिए। उन्हें ही इस विषय में कुछ कहने का अधिकार है। दर्शनों को न जानने से सत्य का ज्ञान हो नहीं सकता।

कोश के अनुसार 'दृश' धातु का अर्थ केवल नेत्रों से ही देखना नहीं होता अपितु मन से देखना, सीखना, समझना, जानना निश्चय करना व खोजना आदि हैं। अन्तर्ज्ञान की दृष्टि से देखना ही दर्शन है। वह ग्रन्थ जिसके द्वारा किसी वस्तु के स्वरूप का पता चलता है। 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' अर्थात् वह ग्रन्थ जो जो जीवन को, पदार्थों को यथार्थ रूप से देखने–समझने हेतु वास्तविक दृष्टि प्रदान करता है– उसे दर्शन कहते हैं।

वह ईश्वर सर्वव्यापक है, मेरे अत्यन्त निकट है। मैं दर्शन कर ही नहीं सकता। उसके दर्शन करने हैं तो मुझे पहले अपने भीतर देखना होगा, जानना होगा–

है देखने का शौक तो आँखों को बन्द कर,
है देखना यही कि न दीखा करे कोई।

अर्थात् आत्मा का जो शरीर मिला है, इन्द्रियाँ उसके भौतिक कार्य करने के साधन के रूप में हैं और ये इन्द्रियाँ बनती ही ऐसी हैं कि वे बाहर जाती हैं, बाहर ही कार्य करती हैं:

पराचि रवानि व्यतृणत् स्वयंभूः
तस्मात्पराङ् पश्यति नान्तरात्मनः।
कठोपनिषद्, चतुर्थ वल्ली

नेत्र शरीर के बाह्य सभी अंगों को देख नहीं पाते। जब बाह्य अंगों का यह हाल है तो शरीर के आन्तरिक रूप को, जो साकार, स्थूल, व दृश्यमान नहीं है, उसे देख पाने का प्रश्न ही नहीं उठता है। आत्मा व ईश्वर को कैसे देख पाएँगे, जो निराकार, सूक्ष्म व अदृश्यमान हैं। नेत्र आत्मा–परमात्मा को देखने के लिए बने ही नही हैं। हम समझते हैं कि नेत्र देखते हैं, कान सुनते हैं, वाणी बोलती है, परन्तु सत्य यह नहीं है। नेत्र रहते हुए भी नेत्र नहीं देख सकते, कान रहते भी कान नहीं सुन पाते, वाणी रहते भी वाणी नहीं बोलती। इनमें विद्यमान कोई अन्य शक्ति विशेष है, जो इनको शक्ति देती है। वह शक्ति न हो तो ये अंग रहते हुए भी कुछ नहीं कर सकते। यह शक्ति, यह व्यवस्था ईश्वर की है। उसके विषय में कहा गया है–

हर जगह मौजूद है पर वह नज़र आता नहीं।
योग–साधन के बिना, उसको कोई पाता नहीं।।

यदि ईश्वर को देख करके ही कोई ईश्वर के होने पर विश्वास करना चाहता है तो हमारा निवेदन है कि वह सृष्टि के कण–कण में व्याप्त है, अणु–अणु में उसका वास है। वह व्यक्ति विशेष न होकर शक्ति–विशेष है। वह दीखता है परन्तु कैसे? किसी वस्तु के न दीखने के 2 कारण हो सकते हैं। एक कारण यह कि वह वस्तु अत्यन्त निकट हो। जैसे नेत्रों से मैं अपने नेत्रों को नहीं देख सकता। दूसरा कारण यह हो सकता है कि वस्तु बहुत दूर हो– जहाँ तक देखने की शक्ति ही नेत्रों में न हो। जैसे हिमालय की सबसे ऊँची चोटी– गौरी शंङ्कर की चोटी (= माऊँट एवरैस्ट) परन्तु हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ये दोनों नियम साकार व भौतिक पदार्थों को देखने (= दर्शन करके) की इच्छा पर लागू होते हैं। सूक्ष्म, निराकार व चेतन पदार्थों को उनकी क्रियाओं से हम उन्हें देख व जान सकते हैं। यह अनुभव व बुद्धि का विषय है–

उसकी हस्ती पै मुझको यकीं भी नहीं,
मेरे होठों पै मगर नहीं भी नहीं।
बुद्धि से सोचता हूँ तो मौजूद है हर जगह,
आँखों से देखता हूँ तो वह कहीं भी नहीं।

ब्रैडला (Bradlaugh) इंग्लैंड का उन्नीसवीं शदी का एक प्रसिद्ध नास्तिक दार्शनिक हुआ है। अनीश्वरवाद का उसने भरपूर प्रचार किया। लाहौर (वर्तमान पाकिस्तान) में उसके नाम पर एक भवन ब्रेडला हाउस भी स्थापित हुआ था। इससे सिद्ध है कि उसके विचार भारत तक भी पहुँचे थे। वह कहा करता था कि यदि मनुष्य के शरीर में आत्मा मानोगे तो कुत्ते में भी आत्मा को मानना पड़ेगा। ईश्वर के अतिरिक्त वह जीवात्मा के अस्तित्व को भी नकारता था परन्तु जब वह मरने लगा तो उसे अनुभव होने लगा कि कोई अज्ञात–अदृश्य शक्ति है अवश्य जो मुझे शरीर से निकलने पर बाधित कर रही है। मृत्यु सबकी होती है परन्तु यह शिक्षिका भी बन जाती है, किसी विशेष विचारवान् व्यक्ति के लिए। ब्रैडला अन्त में यह मानकर आस्तिक हो गया क्योंकि जिन पांच तत्त्वों से बना शरीर है, ये सभी जड़ हैं। इनमें से किसी एक में भी यह शक्ति नहीं है कि मुझे शरीर से निकाल सके। मैं शरीर का त्याग नहीं करना चाहता। फिर क्यों शरीर छोड़ना पड़ रहा है मुझे? कोई तो सत्ता है जो विवश कर रही है कि इस देह से निकलो। कोई कार्य स्वतः नहीं होता। प्रत्येक कार्य के लिए कर्त्ता का होना अनिवार्य है। अतः कार्यों को देखकर–जानकर हम कर्त्ता को जान सकते हैं। नवजात शिशु को देखकर नास्तिक यह कहते हैं कि मनुष्य के अंग ऐसे अपने–आप होते हैं। वह यह सोचने–जानने का कष्ट नहीं करते कि इसमें सुव्यवस्था है। सुव्यवस्थापक बिना सुव्यवस्था हो ही नहीं सकती। गर्भाधान के समय किसी भी प्राणी की आकृति नहीं होती। बाद में सभी अंग व आकृति कौन प्रदान करता है? कौन फिर करता है? जहाँ नाक होनी चाहिए, वहीं सबकी नाक होती है। जहाँ कान होने चाहिए, वहीं ये स्थापित होते हैं। यह अङ्गरोपण कौन करता है? माता अथवा पिता को तो यह भी पता नहीं चलता कि गर्भ में पुत्र है अथवा पुत्री। वे गर्भस्थ सन्तान को अङ्गप्रत्यङ्ग कैसे दे सकते हैं? इस समय संसार के मनुष्यों की संख्या सात अरब हो गई है। जितने मनुष्य हैं, उतनी ही भिन्न–भिन्न आकृतियाँ किस ने बनाईं व क्यों बनाईं? सब मनुष्यों की आवाज़ एक जैसी क्यों नहीं? किस ने ऐसा किया? एक ही नाम के दो व्यक्तियों के हस्ताक्षर क्यों नहीं मिलते? दो सगे भाइयों के हाथों की लकीरें (Finger Prints) भी नहीं मिलतीं तो क्यों नहीं मिलतीं किसने यह विभिन्नता रखी है? तनिक भी इन प्रश्नों पर विचार किया जाए तो यही निष्कर्ष निकलता है कि कोई ऐसी शक्ति अवश्य है जिसे इस बात की चिन्ता थी कि संसार में सुव्यवस्था रहे व अफरा–तफ़री न फैल जाए। विस्तारभय से इन प्रश्नों के उत्तर में इतना ही निवेदन करना हम पर्याप्त समझते हैं।

मनुष्य का जन्म भी आपकी इच्छा से नहीं होता। वह अपनी प्रसन्नता से संसार में नहीं आता। यदि हम अपनी प्रसन्नता से आए होते तो हम संसार के शीर्ष धनवान् या विद्वान् के यहाँ ही उत्पन्न हुए होते क्योंकि एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिलेगा जो मध्यम या निम्न वित्तीय परिवारों के यहाँ जन्म लेना चाहता हो तथा न ही कम पढ़े–लिखे या अनपढ़ माता–पिता की सन्तान कोई व्यक्ति बनना चाहता है। दूसरी ओर किसी माता–पिता को भी अधिकार नहीं मिलता कि वे अपनी मन पसन्द आत्मा को प्राप्त करके अपने यहाँ जीवन प्रदान करके प्रसन्नता व सूखपूर्वक निर्वाह कर सकें।

न अपनी खुशी से यहाँ लोग आए।
मगर सबने आकर यहाँ दिन बिताए।।

कौन निर्णय व व्यवस्था करता है– इन सम्बन्धों का? ऐसा निर्णय करने की क्षमता व अधिकार किसी जीव में तो है नहीं। कोई पक्षपातहीन, न्यायकारी व सर्वज्ञ शक्ति ही ऐसा निर्णय कर सकती

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– यह कैसे साबित हो कि अच्छे कार्य करने से व्यक्ति मोक्ष में जाता है? क्या अभी तक कोई भी व्यक्ति मोक्ष में गया है? अगर हाँ तो आपको कैसे ज्ञान हुआ कि वो व्यक्ति मोक्ष में गया है?

समाधान– हम सब के सब मोक्ष में जा चुके हैं और सारे मोक्ष में से लौटकर आए हैं। यही शास्त्र भी कहता है, वेद भी कहता है कि अच्छे काम करो, निष्काम कर्म करो और मोक्ष में जाओ।

प्रश्न है – इसका पता कैसे चलेगा? आपको भी बता देता हूँ। आपको भी पता चलेगा, मुझे भी और सबको पता चलेगा। जो व्यक्ति मोक्ष में जा रहा है, वो स्वयं ज्ञान रखता है कि अब मेरा मोक्ष होगा या अभी और जन्म होगा। अभी कसौटी यही है कि–

● **"अगर आपके मन में सांसारिक सुख भोगने की सारी इच्छाएँ समाप्त हो गईं हैं तो आपका मोक्ष हो जाएगा।"**

अगर ऐसा लगता है कि अभी और सांसारिक सुख भोगने की इच्छा बाकी है तो समझ लेना अभी और जन्म लेना पड़ेगा। यह कसौटी वेद, योग दर्शनादि शास्त्रों में लिखी है। वहाँ से हमें ज्ञान हुआ।

● अब हर एक को अपना–अपना तो पता चलता ही है। जब भूख लग रही है तो आपको पता चलता है और खाना खाते हैं, पूरा पेट भर जाता है तो आपको पता चलता है कि अब पेट भर गया है, अब और नहीं खाना। ऐसे ही इच्छाएँ समाप्त हो गईं, यह भी पता चलेगा। अब और सांसारिक सुख नहीं भोगना, पूरा हो गया, बस तब समझ लेना कि मुझे अब मोक्ष मिल जाएगा।

● अगर अनादिकाल से आज तक एक भी मोक्ष में नहीं गया, ऐसा मानो तो, भविष्य में क्या कोई आ पाएगा? भविष्य में भी नहीं जाएगा। इसका मतलब है, भगवान यह झूठ बोलता है कि तुम मोक्ष में जाओ। लेकिन ऐसा तो नहीं है। भगवान सच बोलता है।

भगवान कहता है कि पुरुषार्थ करो और मोक्ष में जाओ। इसका मतलब मोक्ष में जाना संभव है। अगर संभव है तो पहले भी बहुत सारे लोग गए और आगे भी लोग जाएँगे। आप भी गए थे, हम भी गए थे, और फिर जाएँगे। जो लगाएँगे तो जाएँगे।

● यह 'संन्यास' किसलिए लिया जाता है? क्या व्यापार करने के लिए, पैसे कमाने के लिए? नहीं, **संन्यास का एक ही उद्देश्य है:– "मोक्ष में जाना"।** संन्यास के बाद फिर मोक्ष होता है। संन्यासी बनने से तो लोगों को डर लगता है कि हमको संन्यासी बनवा कर छुड़वा देंगे। मोक्ष में जाने के लिए संन्यास लेना अनिवार्य (कम्पलसरी) है। आज लो, बीस जन्म के बाद लो, लेना तो पड़ेगा और कोई रास्ता नहीं है।

मुझे मोक्ष में जाना है, दुनिया में नहीं रहना है। मेरी समझ में आ गया। आप भी प्रयास करें, आपको भी समझ में आएगा।

● हमारे गुरुजी कहते हैं – स्वार्थी मत बनना। औरों को भी साथ लेकर जाना। इसलिए मेरी ड्यूटी लगा रखी है, जाओ प्रचार करो। **दूसरे लोगों को भी साथ लेते चलो, अकेले मोक्ष में मत जाना।**

● घर छोड़ना पड़ेगा, संसार छोड़ना पड़ेगा, तब मोक्ष होगा। **मेरा प्रवचन सुनकर के, आप जोश में आकर, कल ही घर मत छोड़ देना। अंततः करना यही पड़ेगा, लेकिन कब करें? उसके लिए तैयारी करनी पड़ेगी, योग्यता बनानी पड़ेगी।**

● आज से आप सोचना शुरु करें कि हमें घर छोड़ना है, हमें वानप्रस्थ लेना है, हमें संन्यास लेना है, योग्यता बनानी है। आपको घर छोड़ने की तैयारी करने में भी पाँच–दस वर्ष निकल जाएँगे। इसलिए जोश में आकर कोई काम नहीं करना चाहिए। होश में रहकर बुद्धिमत्ता से अपने सामर्थ्य को ध्यान में रखकर के करना चाहिए। तैयारी तो आप आज से भी शुरू कर सकते हैं, कि हम समय आने पर योग्यता बनाकर वानप्रस्थ लेंगे, संन्यास लेंगे।

शंका–एक महिला ने अपने पति की क्रूरता एवं अत्याचार से लाचार होकर एक रात मौका देखकर उसकी हत्या कर दी। उसके अलावा उसके पास और कोई रास्ता नहीं बचा था। क्या उसे परमात्मा दंड देगा, जो सजा यहाँ काट ली, क्या कम हो जाएगी?

समाधान– इस शंका का उत्तर है:–

● वैसे तो यह वेद सम्मत नहीं है कि पत्नी, पति के अत्याचारों से परेशान हो जाए तो रात को गँड़ासा लेके उसे काट दे, कोई हथियार लेकर उसको मार डाले। पति को मारना तो नहीं चाहिए।

● अगर पति के अत्याचारों से परेशान है तो वो राजा को शिकायत करे, कोर्ट में जाए कि, साहब मेरा पति मुझे परेशान करता है, उसको ठीक करें, न्याय करें। दरअसल, पत्नी को ऐसा करना चाहिए।

● **यदि पत्नी ने पति की हत्या कर दी तो फिर अपराध तो किया है, अतः उसका दंड भी मिलेगा। अब क्या दंड मिलेगा?** अब क्या दंड मिलेगा? यह तो पूरा–पूरा भगवान ही जाने, हम पूरा–पूरा नहीं समझ पाएँगे। कर्मफल बड़ा विचित्र है, बड़ा कठिन है, गंभीर है।

● यहाँ प्रश्न यह किया है कि अगर उसको जो सजा नहीं मिलती है और वो काट ली तो क्या वो कम (माइनस) हो जाएगी? मान लीजिए, **दस रुपये का दंड उसको ईश्वर के न्याय के अनुसार मिलना चाहिए और यहाँ सरकार ने छह रुपए का दंड (दुःख) दे दिया तो बाकी बचा चार रुपया। बस चार रुपए भगवान उसको दंड दे देगा।** वो छह रुपए कम क्यों हुआ? दंड भोग लिया न, भोगना ही तो था। दस का भोगना था, छह का भोग लिया, अब चार बाकी बच गया। चार और मिल जाएगा। **इस तरह से एक अपराध का दंड एक ही बार मिलता है, यह न्याय कहलाता है।**

शंका– क्या मोक्ष के बाद जन्म होता है? यदि हाँ, तो जब हमें फिर से सांसारिक दुःख उठाने पड़ेंगे तो फिर मोक्ष का लाभ ही क्या रहा?

समाधान– मुझे भी स्वीकार है कि मोक्ष से वापस तो लौटना पड़ेगा। मोक्ष से लौट कर फिर जन्म लेंगे तो पुनः दुःख आ आएँगे तो फिर मोक्ष में जाने का फायदा ही क्या हुआ?" इस शंका का उत्तर है:–

● मेरा एक प्रश्न है– दोपहर में भूख लगी तो आपने खाना खा लिया। क्या शाम को भूख नहीं लगेगी? यदि शाम को भूख लगेगी, तो फिर दोपहर में खाने क्या लाभ हुआ? खाना, खाना बेकार हुआ न। बताइए, खाना खाया आपने, वो उपयोगी हुआ कि बेकार गया? उपयोगी हुआ। कारण कि, इससे छह घंटे तक उस भूख के दुःख से छुटकारा हो गया। दोपहर बारह बजे भूख लगी तो आपने यह सोचकर भोजन किया कि शाम को फिर भूख लगेगी तो फिर खा लेंगे। अभी छह घंटे तो कम से कम इस भूख से जान छूटे।

● **अगर छह घंटे तक भूख के दुःख से छुटकारा पाने के लिए आप भोजन करते हैं, तो इकतीस नील दस खरब चालीस अरब वर्षों तक दुःख से छुटकारा पाने के लिए (मोक्ष के लिए) प्रयास क्यों न करें?** करना चाहिए। इसलिए मोक्ष के लिए अभी प्रयास करो।

● **जब दोबारा भूख लगेगी तो दोबारा खा लेंगे, और जब दोबारा मोक्ष से लौट कर आएँगे तो दोबारा फिर चले जाएँगे।**

● ऐसा तो नहीं है कि मोक्ष केवल एक ही बार मिलेगा, मेरा मिलेगा ही नहीं। भगवान ने कोई रोका थोड़े ही है। वो कहता है– दोबारा फिर कर्म करो, फिर आ जाना मोक्ष में। दोबारा रास्ता खुला है। हम बार–बार मोक्ष में जाएँगे ओर वहाँ अपना कर्मफल भोगेंगे और फिर वापस आ जाएँगे। फिर दोबारा कर्म करेंगे, फिर चले जाएँगे। इसलिए बार–बार मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रयास करना चाहिए।

दर्शनयोग महाविद्यालय
रोजड़वन, गुजरात

वैदिक प्रार्थना

सुषारथिरश्वानिव धामन्ते विश्वं भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि।
अपामनीके समिथे यऽआभृतस्तमश्याम मधुमन्तं तऽऊर्मिम्।।

यजु. 17.99

The entire universe is your abode;
You live in our hearts;
O Omnipresent, you are manifest in
the oceans.
The surging high tides carry your
sweet fragrance for us to savour.

यह सकल जग धाम तेरा।
तू रमा है सिन्धु में, तू
हृदय में, तू रमा जीवन में सारे।
सलिल तल पर उठ रही हैं, मधुमयी ऊंची हिलोरें,
मधुर तेरी ऊर्मि का उस
देव, हम आस्वाद पायें।

thearyasamaj.org

जीवन की सफलता का मूल–'मन्त्र असतो मा सद् गमय'

● मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

भारतीय धर्म व संस्कृति में वृहदारण्यकोपनिषद् के वाक्य **'असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमयेति'** का विशेष महत्त्व है। **'असतो मा सद् गमय'** में ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि मैं सत्य मार्ग पर चलूँ। इसका अर्थ है कि मैं असत्य मार्ग पर न चलूँ। प्रश्न उत्पन्न होता है कि सत्य मार्ग पर चलना आवश्यक क्यों है और असत्य मार्ग पर न चलना जरूरी क्यों है? सत्यमार्ग को ऋजु मार्ग भी कहते हैं। ऋजु मार्ग सीधा होता है और अन्य मार्ग लम्बे व टेढ़े होने के साथ उन पर चलने से यात्री मार्ग भटक कर मंजिल से दूर चले जाते हैं। सत्य मार्ग वह मार्ग होता है। जिस पर चलकर अन्ततः मंजिल या लक्ष्य की प्राप्ति निश्चित होती है। असत्य मार्ग उल्टा मार्ग है जिससे हम लक्ष्य के विपरीत चलते हैं वह कौन सा पथ है और ऊपर चल कर हम कहाँ पहुँचेंगे, यह विचार करना प्रासंगिक एवं आवश्यक है। हम मनुष्य हैं और मनुष्य हमारे मननशील होने और प्रत्येक कार्य को सत्य वा असत्य का विचार करके करने के कारण मिला है। मनन करने पर हमें ज्ञात होता है कि जीवन कर्मों को करने का नाम है। कर्म दो प्रकार के होते हैं जिन्हें अच्छा व बुरा, सत्य व असत्य, शुभ व अशुभ अथवा पुण्य वा पाप कह सकते हैं।

अब यह देखना है कि सत्य कर्म करने से क्या प्राप्त होता है और असत्य या पाप करने से मनुष्य को क्या लाभ व हानि होती है। सत्य कर्म ऐसा है कि एक विद्यार्थी तपपूर्वक अध्ययन कर परीक्षा दे तो उसे उसके पुरुषार्थ के अनुरूप फल व असफलता मिलती है और जो विद्यार्थी अध्ययन की उपेक्षा कर प्रतिगामी व विपरीत कार्य करता है, वह असफल होता है। इसी प्रकार से सत्य कर्मों को करके उन्नति व असत्य कर्म व कार्यों को करके अवनति होती है। उन्नति भी दो प्रकार की कह सकते हैं। एक तो सांसारिक उन्नति जिसमें सुख–सुविधाओं की वस्तुओं की प्राप्ति व धन सहित शारीरिक उन्नति को भी सम्मिलित कर सकते हैं और दूसरी उन्नति आध्यात्मिक उन्नति होती है। आध्यात्मिक उन्नति का अर्थ है कि यदि हम संसार की उत्पत्ति, स्थिति व प्रलय की अवस्था पर विचार करते हैं तो हमें यह सृष्टि परमाणुओं से बनी हुई दृष्टिगोचर होती है। इन परमाणुओं को हम अनादि व मूल प्रकृति, अनुत्पन्न, नित्य, अजन्मा, सनातन व अविनाशी कह सकते हैं। **मूल प्रकृति के इन परमाणुओं का संयोग कराने वाला कोई अवश्य होना चाहिए जिससे सूर्य, चन्द्र, पृथिवी व अन्य सभी पदार्थों की उत्पत्ति हो सके।** वह सत्ता ईश्वर है। इससे ईश्वर का अस्तित्व होना सिद्ध होता है। इस पर निरन्तर व नियमित रूप से चिन्तन करने पर ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति का ज्ञान होता है जिससे हमारी ईश्वर से निकटता होकर हम उसकी उपासना में संलग्न हो जाते हैं। इसका फल हमारे गुण, कर्म व स्वभाव में परिवर्तन होकर वह ईश्वर के अनुरूप बन जाते हैं। इन शुभ कर्मों की वृद्धि और पूर्व पाप व असत्य कर्मों का भोग हो जाने पर मनुष्य की इस जन्म व परजन्म में उन्नति होती है। सत्य मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति का भावी जन्म अच्छी योनि, अच्छे कुल व अच्छे प्रदेश व लोक में होना शास्त्र प्रमाण व तर्क से सिद्ध होता है। कालान्तर में सत्य व शुभ कर्मों की वृद्धि व ईश्वर से अति निकटता और असम्प्रज्ञात समाधि की प्राप्ति होने पर जीवात्मा वा मनुष्य अशुभ कर्म से निवृत होकर जन्म मरण से छूट जाता है। इस अवस्था का नाम मुक्ति होता है जिसका वर्णन हमारे शास्त्रों और महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों में उपलब्ध है। इसके विपरीत असत्य मार्ग पर चलने व अशुभ कर्म करने से मनुष्य बन्धनों में फँसकर, अवनति को प्राप्त होकर अपने वर्तमान व भावी जीवन अर्थात् पुनर्जन्म को बिगाड़ लेता है। अतः **'असतो मा सद् गमय'** का सन्देश जीवन को उन्नति के पथ पर आरूढ़ करना व अपनी वर्तमान स्थिति को सुधार कर लक्ष्य व लक्ष्यों की प्राप्ति है।

संसार में अनेक महापुरुषों के जीवन हमें ज्ञात हैं। यह सब **'असतो मा सद् गमय'** के ही प्रतीक हैं। संसार में जिन जन्म लेने वाले व्यक्तियों की चर्चा नहीं की जाती, वह प्रायः इस मन्त्र–विचार–सूक्ति के विपरीत आचरण करने वाले सामान्य कोटि के लोग होते हैं। महर्षि दयानन्द संसार के सभी मनुष्यों से भिन्न महापुरुष थे। उन्होंने संस्कृत के अलौकिक आर्ष व्याकरण के अध्ययन के साथ अपने समय में उपलब्ध वेद, शास्त्रीय ग्रन्थों व सहस्त्रों अन्य ग्रन्थों को भी पढ़ा व समझा था। उन्होंने योग का सफल अभ्यास कर असम्प्रज्ञात समाधि को भी सिद्ध किया था। अपने गुरु प्रज्ञाचक्षु दण्डी विरजानन्द सरस्वती से आर्ष व्याकरण एवं शास्त्रों का अध्ययन करने के बाद उनकी प्रेरणा से उन्होंने संसार को सत्य मार्ग पर चलाने की प्रतिज्ञा की थी और उसे प्राणपण से पूरा करने का प्रयास किया। सत्य पथ पर चलते हुए उन्होंने लगभग 18 बार विषपान किया परन्तु सत्य का मार्ग नहीं छोड़ा। उनका सारा जीवन **'असतो मा सद्गमय'** का जीता जागता व सर्वोत्तम उदाहरण है। जो विशेषता उनके जीवन में है वह अन्य महापुरुषों के जीवन में देखने को नहीं मिलती। उनके जीवन चरित्र का अध्ययन कर तथा उसे आचरण में लाकर भी हम अपने जीवन को उन्नत बना सकते हैं। उन्होंने इसी उद्देश्य से सत्यार्थ प्रकाश के नाम से संसार का अनूठा व अपूर्व ग्रन्थ लिखा है। 14 समुल्लासों में रचित इस ग्रन्थ के प्रथम उल्लास में असतो मा सदगमय का क्रियात्मक रूप प्रस्तुत करते हैं तथा अन्त के 4 समुल्लासों में **'तमसो मा ज्योतिर्गमय'** का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इस ग्रन्थ का अध्ययन करना समुद्र में एक गोता लगाना और बहुमूल्य मोतियों को पाने के समान है और अन्यत्र श्रम करना मानों सारा जीवन गँवाकर कौड़ियों को पाना है। सभी मनुष्यों को न्यूनातिन्यून एक बार निष्पक्ष होकर इस ग्रन्थ का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन करने से वेदों के सत्य स्वरूप का ज्ञान भी होता है। वेद स्वयं भी **'असतो मा सद् गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय अमृतो का अमृतं गमय'** का ही ज्ञान प्राप्त कराकर इनकी प्राप्ति के साधनों का भी मार्ग प्रशस्त करते हैं। वेदेतर संसार में जितने भी धार्मिक ग्रन्थ हैं उनमें सत्य भी है और बहुत कुछ असत्य भी है, जिसका दिग्दर्शन सत्यार्थ प्रकाश में कराया गया है। अतः वेदों व सत्यार्थ प्रकाश के आलोक में सभी ग्रन्थ सत्यासत्य को सामने रखकर विचारणीय व संशोधनीय है। यह ऐसा ही है जैसे हम ज्ञान व विज्ञान के क्षेत्र में नित्यप्रति इसे अपडेट व संशोधित करते रहते हैं। यदि ऐसा न करते तो संसार में जो आज उपलब्धियाँ प्राप्त हुई हैं, वह न हुईं होती। यही कार्य धार्मिक ग्रन्थों में भी होना चाहिए अर्थात् सत्य का अनुसंधान और तदनुसार संशोधन।

सत्य का अनुसंधान कर महर्षि दयानन्द ने मानव समाज की सर्वांगीण उन्नति का एक नियम बनाया। वह नियम है कि **सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।** यह नियम भी असतो मा सद् गमय व तमसो मा ज्योतिर्गमय का ही रूपान्तर व पर्याय है। इसी को भिन्न प्रकार से उन्होंने एक अन्य नियम में भी कहा है कि **सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।** अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए वह भी असतो मा सद् गमय का ही एक रूप है। इसी क्रम में सभी मतों के अनुयायियों के लिए यह भी विचारणीय है कि क्या हम, सभी व कोई एक भी, कर्म के फलों से बच सकते हैं? इसका उत्तर है कदापि नहीं। मांसाहार, अण्डे का सेवन, सामिष भोजन, धूमपान, मदिरापान, असत्य भाषण व व्यवहार एवं दूसरों का उपकार करना अशुभ व अवैदिक कर्म हैं। इन कर्मों को करके हम कर्म बन्धन में फँसते हैं। हमें यह भी जानना है कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त केवल हिन्दुओं, सिखों, बौद्धों व जैनियों के लिए ही नहीं है अपितु यह नियम व सिद्धान्त संसार के सभी मनुष्यों व मनुष्येतर प्राणियों पर लागू होता है। इसका कारण है कि संसार में ईश्वर एक है। वही सब मनुष्यों व प्राणियों को उनके कर्मों व प्रारब्ध के अनुसार जन्म देता है। उसका पुनर्जन्म का सिद्धान्त भी सभी मतों व धर्म के लोगों के लिए एक समान है। अतः जीवन की आध्यात्मिक व भौतिक उन्नति के लिए वैदिक मान्यताओं व सिद्धान्तों किं वा वैदिक धर्म को अपनाना सभी के लिए आवश्यक है जिससे हम मनुष्य जीवन के सर्वोत्तम पुरुषार्थ धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष से वंचित न हों। निर्णय करना हमारे व सभी मतों के मानने वाले अनुयायियों के हाथ में है। इसी क्रम में यह भी विचार व तर्क सिद्ध है कि संसार में स्वर्ग, जन्नत, नरक व दोजख आदि सब इस पृथिवी व इसके समान अन्य लोकों पर ही है। अच्छे कर्मों का फल सुख है और सुख विशेष ही स्वर्ग है। इसी प्रकार अशुभ कर्मों का परिणाम दुःख है और उसका परिणाम नरक आदि भोग है। जीवात्मा जन्म लेकर ही सुख व दुःख का भोग कर सकता है। मृत्यु व अगले जन्म के बीच जीवात्मा को कोई सुख व दुख नहीं होता। यह अवस्था इस प्रकार से सुषुप्ति की अवस्था होती है जिसमें जीवात्मा को इन्द्रियों से अनुभव होने वाले सुख व दुख नहीं होता। इस विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है कि वेदाध्ययन सभी को अवश्य करना चाहिए अन्यथा हमें उन्नति व मुक्ति का लाभ नहीं होगा और हम बार–बार जन्म लेकर मृत्यु को प्राप्त होते रहेंगे।

यजुर्वेद का एक प्रमुख मन्त्र है, 'ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रन्तन्न आसुव।।' इस मंत्र में सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि ईश्वर मेरे सभी दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर करे और जो कल्याणकारक गुण, कर्म, स्वभाव व पदार्थ हैं, वह सब हमें प्राप्त कराए। यह प्रार्थना भी असतो मा सद् गमय की पूरक होने से सत्य मार्ग पर चलने के लिए प्रोत्साहित करती है। आईए, जीवन को सत्य मार्ग पर चलाते हुए जीवन से तम व अन्धकार को दूर करें और अमृत वा मोक्ष की प्राप्ति करें।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985121

thearyasamaj.org

कुछ उपनिषदों से (छान्दोग्योपनिषद्)

● डा. सुशील वर्मा

अध्यात्म की शिक्षा प्रदान करने हेतु उपनिषदों में बहुत सरल एवं सुगम कथाएँ हैं जिनके द्वारा उस ब्रह्म का वर्णन किया गया है। छान्दोग्योपनिषद् के षष्ठ प्रपाठक में "सदेवेदमग्र आसीत्" (पहले खण्ड से लेकर सातवें खण्ड तक) = सद् एव इदम् अग्र आसीत् का उपदेश श्वेतकेतु को उसके पिता द्वारा वर्णित है।

श्वेतकेतु के पिता आरुणि मुनि ने अपने पुत्र से कहा कि "सौम्य अब तेरी आयु ब्रह्मचर्य–धारण करने की है अतः तू आचार्य के सान्निध्य में रहकर विद्याध्ययन कर। हमारे कुल में कोई ऐसा नहीं हुआ जिसने वेदों का अध्ययन न किया हो और केवल मात्र "ब्रह्म–बन्धु" ही हो अर्थात उसकी योग्यता केवल इतनी ही हो कि ब्राह्मण उसके बन्धु हैं, सम्बन्धी हैं, स्वयं वह कुछ नहीं जानता हो। 12 वर्ष की आयु में श्वेतकेतु आचार्य के पास गया और 12 वर्ष शिक्षा ग्रहण कर, वेदों को पढ़कर बड़ा मनस्वी, अपने को वेदज्ञ मान कर लौट आया। पिता ने उससे प्रश्न किया कि तूने अपने गुरु से कभी वह आदेश भी पूछा जिससे अश्रुत श्रुत हो जाता हो, अमत मत हो जाता हो, अज्ञात विज्ञात हो जाता हो। श्वेतकेतु ने कहा कि पिता जी वह कैसा आदेश है? पिता ने समझाया कि जिस प्रकार मिट्टी के ढेले के जानने से संसार के सभी मिट्टी से बने पदार्थों का ज्ञान हो जाता है। ये सभी पदार्थ मिट्टी के विकार हैं। नाम अलग–अलग हैं वास्तव में मिट्टी ही सत्य वस्तु है। उसी प्रकार लौह–चुम्बक के जानने से सभी लोहे से बने पदार्थों का ज्ञान हो जाता है, वास्तव में लोहा ही सत्य वस्तु है। इस प्रकार यह आदेश है। जिज्ञासु पुत्र ने पिता से इसे समझाने के लिए कहा।

आरुणि मुनि ने पुत्र को उत्तर दिया कि हे सौम्य, सृष्टि के प्रारम्भ में 'सत्' ही था। कई आचार्यों का कहना है कि सृष्टि के प्रारम्भ से 'असत्' ही था। यदि यह मान लिया जाए कि प्रारम्भ में 'असत्' था तो यह मानना पड़ता है कि उस 'असत्' से सत् हुआ। परन्तु असत् से सत्, कैसे हो सकता है? यही न्याय संगत है कि सृष्टि के प्रारम्भ में सत् ही था। उस सत्–रुप चेतन शक्ति ने इच्छा की कि मैं बहुत हो जाऊँ। उसने तेज रचा। तेज ने इच्छा की कि मैं बहुत हो जाऊँ उसने जल को रचा, इसलिए गर्म होने पर पसीना आ जाता है। जल ने अन्न को रचा इसलिए जल जहाँ बरसता है वहीं अन्न प्रचुर मात्रा में होता है।

इसी तथ्य को आगे बढ़ाते हुए पिता ने कहा कि तेज, जल, अन्न – इन तीनों भूतों से तीन ही बीज बनते हैं– अण्डज, जीवज, उद्भिज, अर्थात् अंडे से होने वाले, जरायु से होने वाले और पृथिवी भेद कर होने वाले।

इस प्रकार उस 'सत्' रूप चेतन शक्ति ने तेज, जल, अन्न और इनसे बने अण्डज, जीवज–उद्भिज–इन तीनों बीजों में जीवात्मा के साथ प्रवेश करके नाम और रूप वाले जगत का विस्तार कर दिया।

तत्त्वतः संसार के हर पदार्थ में तेज, जल और अन्न के गुण रहते हैं। उदाहरण रूप में अग्नि का जो रक्त वर्ण है वह तेज का रूप है, जो शुक्ल वर्ण है वह जल का रूप है और जो कृष्ण वर्ण है वह अन्न का रूप है।

सूर्य को देखो – इस का रक्त वर्ण – तेज, शुक्ल वर्ण जल एवं कृष्ण वर्ण अन्न का रूप है।

इसी प्रकार चन्द्रमा, विद्युत में तीनों वर्ण तीन आवृत तेज, जल अन्न का रूप हैं। ये सब तो वर्णों के व्यवहार के नाम मात्र हैं। वास्तव में ये 'सत्य' ही के रूप हैं।

जिस प्रकार यह ब्राहमाण्ड में विद्यमान रूप हैं उसी प्रकार हमारे शरीर में ही ये तीनों 'सत्य' के रूप हैं। पहले अन्न को लें – खाने के बाद तीन भागों में बँट जाता है। स्थूल तत्त्व विष्ठा बन जाता है, मध्यम तत्त्व माँस और सूक्ष्म तत्त्व मन बन जाता है। 'जल' पीने से भी वह तीन भागों में बँट जाता है– स्थूल तत्त्व मूत्र बन जाता है, मध्यम तत्त्व रुधिर और सूक्ष्म तत्त्व प्राण बन जाता है।

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

Thus Spoke Swami Dayanand

❖ Truthfulness is the harmony of thought, word and deed.

❖ He who practices good deeds and eradicates sin and vice is a Sanyasi.

❖ He, who is in communion with God and possesses that holy nature by which all wicked deeds are renounced, is called a Sanyasi.

❖ Those Sanyasis who do not preach the truth, nor study nor teach the Vedas and other Shastras are a mere burden to the community.

❖ Those alone deserve to be called Sanyasis and great souls who walk in the path of rectitude and help others to do the same, promote their own happiness as well as that of the whole world here and hereafter.

❖ No single individual should be invested with absolute power.

❖ Let a nation, therefore, elect the most learned men, as members of the Educational Assembly, the most devout men, as members of the Religious Assembly and men of the most praiseworthy character, as members of the Legislative Assembly.

❖ All men should subordinate themselves to the laws that are calculated to promote general well-being; they should be free in matters relating to individual well-being.

❖ Even a meeting of thousands of men cannot be designated an Assembly, if they be destitute of such high virtues as self-control or truthful character, be ignorant of the Vedas and be men of no understanding.

❖ The king who can be both gentle and stern as occasion demands is highly honoured if he be gentle to the good and stern towards the wicked.

❖ He who looks in injustice perpetrated before his very eyes and still remains mute, or says what is false or unjust, is the greatest sinner.

❖ Justice being destroyed shall destroy the destroyer. Justice being protected shall protect the protector.

❖ Justice alone, in this world, is the true friend that accompanies a man even after death; all other companions become extinct with the extinction of the body.

❖ Justice never forsakes a man.

Compiled by — Satyapriya, 09868426592

(Sourced from the English translation of 'Satyarth Prakash' by Dr. Chiranjiv Bhardwaj and published as 'The Light of Truth' from D.A.V. Publication Division)

thearyasamaj.org

वैदिक विज्ञान की मान्यताएं-4

● कृपाल सिंह वर्मा

(26) ब्राह्मण ग्रन्थ वेद की वैज्ञानिक व्याख्या हैं। इसी प्रकार उपनिषद् आध्यात्मिक तथा स्मृति ग्रन्थ वेद की सामाजिक व्याख्याएँ हैं। शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद का सबसे प्राचीन वैज्ञानिक भाष्य है। एक वर्ष में ऋतुओं का चक्र पूरा हो जाता है, इसे ही वैदिक विज्ञान की भाषा में संवत्सर कहते है। छः ऋतुएँ है। वैदिक विज्ञान की भाषा में इन्हें पितर कहते हैं क्योंकि अनेक प्रकार के वनस्पतियों तथा प्राणियों को ये ही जन्म देती हैं। सूर्य से आने वाली अग्नि को आदित्य कहते हैं। यह छः ऋतुओं में विभक्त हो जाता है। प्रत्येक ऋतु के अपने विशेष गुण-धर्म होते हैं।

इसी प्रकार आदित्य 12 मास में विभक्त हो जाता है। इन 12 भागों में से प्रत्येक को कपाल कहते हैं तथा पूरे वर्ष में आदित्य के स्वरूप को पुरोडाश कहते हैं। इसलिए आदित्य का पुरोडाश बारह कपाल का होता है। ये बारह आदित्य द्यु-लोक के देवता कहे जाते हैं।

इसी प्रकार वायु जो अन्तरिक्ष लोक का देवता है इसका पुरोडाश ग्यारह कपाल का होता है। दस प्राण तथा ग्यारहवाँ आत्मा। अग्नि का पुरोडाश आठ कपाल का होता है क्योंकि वसु आठ होते हैं।

इसलिए वैदिक विज्ञान में 33 दिव्यशक्तियाँ होती हैं। आठ वसु, ग्यारह रूद्र तथा बारह आदित्य, इन्द्र तथा प्रजापति, ये 33 देवता हैं। भूगोल के देवताओं को वसु, अन्तरिक्ष लोक के देवताओं को रूद्र तथा द्युलोक के देवताओं को आदित्य कहते हैं। वैदिक विज्ञान में प्राकृतिक शक्तियों को देवता कहते हैं।

(27) वसु, रूद्र, आदित्य, पुरोडाश, कपाल, देवता, पितर, संवत्सर ये सब वैदिक विज्ञान के परिभाषित शब्द हैं। इनके स्वरूप को जाने बिना विज्ञान को नहीं समझ सकते।

(28) वैदिक विज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण शब्द है द्रोणकलश। इसे अब कमण्डल कहते हैं जिसे संन्यासी लोग रखते हैं। यह अण्डाकार होता है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर एक अण्डाकार पथ में चक्कर काटती है। इसलिए पृथ्वी कभी सूर्य के निकट तथा कभी दूर चली जाती है। इसी से ऋतुएँ बदलती हैं। इसलिए शतपथ ब्राह्मण में कह कि दोणकलश से ऋतुएँ बदलती हैं।

(29) शतपथ ब्राह्मण काण्ड 5, अध्याय 1, ब्राह्मण 5 की प्रथम कण्डिका में कहा है-

"जब दौड़ते हैं तो पृथ्वी लोक को जीत लेते हैं। जब ब्रह्मा नाभि तक उठे हुए चक्र पर चढ़कर सामगान करता है तो अन्तरिक्ष लोक को जीतता है। जब यूप को खड़ा करता है तो देवलोक को जीतता है। इसलिए तीन प्रकार का कृत्य किया जाता है।"

"रथ अर्थात् बस, कार आदि से दौड़कर पृथ्वी को जीतते हैं। ब्रह्म चक्रसे अन्तरिक्ष को जीतते हैं। 'ब्रह्म' वैदिक विज्ञान में वायु को कहते हैं। ब्रह्म चक्र का अर्थ है वायु काटने वाला चक्र जिसे एक्सैलर कहते हैं जो वायुयान के अग्रभाग में लगा रहता है। जब यह तेजी से घूमता है तो एक प्रकार की ध्वनि करता है जिसे सामगान कहते हैं। ये चक्र वहीं तक कार्य करता है जहाँ तक वायुमंडल में वायु विद्यमान होती है। इससे ऊपर, यूप कार्य करता है। क्योंकि वह पीछे को धुवां धकेलने के कारण आगे को दौड़ता है। उसे वायुमण्डल की आवश्यकता नहीं होती।

द्यु लोक ब्रह्मांड का वो भाग होता है जो हमेशा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित रहता है वहां वायुमंडल नहीं होता।

"दौड़कर पृथ्वी को जीतते हैं। ब्रह्म चक्र (वायु काटने वाला पंखा) से अन्तरिक्ष लोक को जीतते हैं तथा यूप से घु लोक को जीतते है" शतपथ ब्राह्मण का यह कथन पूर्ण रूप से वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है।

(30) वेदी-वैदिक विज्ञान में वेदी शब्द का प्रयोग होता है। वेदी क्या है? हमारा शरीर एक वेदी है, इसमें अन्न रूपी आहुति डालतें हैं तो जीवन चलता रहता है। कार का इंजिन एक वेदी है। इसमें पेट्रोल की आहुति देते रहने से इंजिन चलता रहता है। वेदी अनेक प्रकार की होती हैं तथा हवि (जिसकी आहुति दी जाती है) अनेक प्रकार की होती हैं। ये सब इंजीनियरिंग का विषय है।

(31) यज्ञ-वैदिक विज्ञान में यज्ञ शब्द का उपयोग बार बार होता है। यज्ञ क्या है? ऋग्वेद में भूलोक पर पाए जाने वाली अग्नि शक्तियों का विज्ञान है। यजुर्वेद में अन्तरिक्ष में पायी जाने वाली शक्ति विद्युत आदि का विज्ञान है। सामवेद में द्यू लोक में पायी जाने वाली शक्ति सूर्य का विज्ञान है। इन शक्तियों का उपयोग जीवन को सुखी बनाने के लिए, यन्त्र आदि का विकास करना ही यज्ञ है। यज्ञ करना जीवन का श्रेष्ठतम् कार्य है।

(32) शतपथ ब्राह्मण का प्रथम काण्ड हविर्यज्ञ है। हवि उस पदार्थ को कहते हैं जिसकी आहुति दी जाती है। हवि इस प्रकार का ईंधन है। वैदिक विज्ञान की भाषा में इसे सोम कहते हैं। सोम अग्नि उत्पादक पदार्थ को कहते हैं।

(33) विष्णु- भूलोक में विष्णु अग्नि के रूप में, अन्तरिक्ष लोक में विद्युत के रूप में तथा द्यु लोक में सूर्य के रूप में रहता है। ये तीनों अग्नि के रूप है। इनको समवेत रूप से विष्णु कहते हैं।

(34) सूर्य ताप एवं प्रकाश देकर प्रत्येक वस्तु तथा प्राणी को प्रेरित करता है। इसलिए वैदिक विज्ञान की भाषा में सूर्य को सविता कहता हैं।

(35) ऋग्वेद में भूगोल का विज्ञान है। इसके वैज्ञानिक को होता कहते हैं। यजुर्वेद में अन्तरिक्ष लोक का विज्ञान है इसके वैज्ञानिक को अध्वर्यु कहते हैं। सामवेद में द्युलोक का विज्ञान है, इसके वैज्ञानिक को उद्गाता कहते हैं। चारों वेदों के विज्ञान को जानने को ब्रह्मा कहते हैं।

253 शिवलोक,
कंकरखेडा, मेरठ।
मो. न. - 9927887788

☞ पृष्ठ 07 का शेष

कुछ उपनिषदों से...

तेजस् पदार्थ घी, मक्खन खाने पर तीन भागों में बँट जाता है स्थूल तत्त्व अस्थि, मध्यम तत्त्व मज्जा और सूक्ष्म तत्त्व वाणी बन जाता है। इसलिए 'मन' - अन्न से प्राण जल से और वाणी तेज से बनती है। मन अन्नमय है, प्राण आपोमय है और वाक तेजोमयी है।

"सदेवेदमग्र आसीत्" उपदेश के पश्चात उद्दालक आरुणि कुमार अपने पुत्र को स्वप्न के अन्त अर्थात् सुषुप्ति के विषय में कहते हैं कि पुरुष जब गाढ़ निद्रा में होता है तो कहते हैं कि वह स्वपिति में है अर्थात् गाढ़ निद्रा में है। तब वह ब्रह्म 'सत्' के साथ मिल गया होता है। 'स्व' अर्थात् वास्तविक रूप-'अर्थात वास्तविक रूप- 'स्वरूप' को पहुँच गया है- अपनेपन में गया होता है। इस अवस्था में मन भी विश्राम में है अतः मन और इन्द्रियों का संयोग न होने के कारण जीवात्मा पूर्णतया अपने स्वभाव से युक्त होता है। इसे ही सुषुति अवस्था कहते हैं। सांख्य दर्शन में भी सुषुति में भी जीव को ब्रह्म के सान्निध्य में रहने वाला बताया है। जीव इस अवस्था में चाहे थोड़ी देर के लिए ही सही, मोक्ष का सा आनन्द प्राप्त करता है - "समाधि-सषुप्ति-मोक्षेषु ब्रह्मरुपता"। भूख एवं प्यास के सम्बन्ध में चर्चा कर यह निष्कर्ष उससे समझते हैं कि यदि शरीर को अंकुर मान लिया जाए तो उसका मूल अन्न है। अन्न का मूल जल है, जल का मूल तेज, तेज का मूल सत् है। इस सम्पूर्ण जगत का मूल सत् है। इसकी प्रतिष्ठा 'सत' है। ये तीनों देवता ही विकसित होकर पुरुष की रचना करते हैं। मरते समय यह क्रम उलट जाता है। वाणी मन में लीन हो जाती है। (बोलना बन्द हो जाता है) मन प्राण में (उसे कुछ समझ नहीं आता) प्राण तेज में लीन हो जाते हैं। (जब वह ठंडा पड़ जाता है। और अन्त में तेज उस परम देव सत् में लीन हो जाता है) वह परम देव सत् स्थूल नहीं अणिमा है- सूक्ष्मतम है। यह स्थूल शरीर सत्य नहीं, वही सत्य है, वह आत्मा है। हे श्वेतकेतु 'तत्त्वमसि' तू अर्थात मेरी आत्मा तत्त्व है। तत् त्वम् असि - तू वह है। इस तथ्य को समझाने के लिए वह शहद, नदियाँ, वट वृक्ष के फल, जल में घुला नमक आदि उदाहरणों का सहारा भी लेते हैं ताकि वह सत् को अर्थात् उस ब्रह्म को समझ सके।

इस तत्त्वमसि के अर्थ में बहुत चर्चा होती है, विवाद होता है। इसका एक अर्थ है 'तत्-त्वम्-असि- तू वह है। वह अर्थात् ब्रह्म। दूसरा अर्थ है तत्त्वम्-असि- तू तत्त्व है। तत्त्व अर्थात् सत्।

शंकराचार्य के अनुसार वह (ब्रह्म) तुम हो अर्थात् तूँ ब्रह्म हो।

महर्षि के अनुसार 'तुम' उसमें (ब्रह्म में) हो।

तस्मिन् त्वम् असि। सत्यार्थ प्रकाश

महात्मा नारायण स्वामी के अनुसार तुम उसके (ब्रह्म के) हो

तस्य त्वम् असि (छान्दोग्योपनिषद् भाष्य)

सारांश यह है कि पिण्ड में यथार्थ सत्ता शरीर की नहीं 'आत्मा' की है, ब्रह्माण्ड में यथार्थ सत्ता प्रकृति की नहीं ब्रह्म की है। वास्तविक तत्त्व ही है, वास्तविक सत् वही है।

गली मास्टर मूल चन्द वर्मा
फाजिलका-152123

thearyasamaj.org

कुछ पुराने विख्यात भजनोपदेशक

● डा. भवानीलाल भारतीय

प्रज्ञाचक्षु दादा बस्तीराम और उनकी जगत्कर्ता परमात्मा की स्तुति

116 वर्ष की परिपक्व आयु भोगकर 26 अगस्त 1958 को दिवंगत हुए दादा बस्तीराम यद्यदि नेत्रहीन थे तथापि उन्हें आत्मज्ञान प्राप्त था। इसलिए उन्होंने ऋषि दयानन्द के प्रवचनों को सुन कर वैदिक धर्म प्रचारक बनने का निश्चय किया और सम्पूर्ण जीवन खंजई पर गा गा कर धर्म प्रचारक करते रहे। लोक गायकी में माहिर दादा बस्तीराम को सैद्धान्तिक ज्ञान तो था ही वे काव्य रचना के शास्त्रीय नियमों से भी अनभिज्ञ नहीं थे। यही कारण है कि उस युग में उनकी रचनाएँ घर–घर में गाई और सुनी जाती थीं। उनके भजनों के अनेक संग्रह हरियाणा साहित्य संस्थान (गुरूकुल झज्जर) ने प्रकाशित किये हैं।

उनका प्रसिद्ध भजन धन धन तेरी कारीगरी' दार्शनिकता की झलक अपने भीतर समाए है। कवि का पूछना है कि यदि बिना किसी भौतिक साधन के परमात्मा विश्व का सृजन कर सकता है तो यह उसकी अद्वितिय कारीगरी है–

धन धन तेरी कारीगरी।
जब निर्विकार और निराकार (तब)
साकार बना दिया जन कैसे?
विविधरूपा प्रकृति का आधार लेने में भी तेरी चतुराई है–
किये रंग बिरंगे फूल और बादल रंग की रैणी (कलम) कहीं नहीं?

दादा बस्तीराम के व्यक्तित्व और कृतित्व से सबको परिचित होना चाहिए।

(2) राजस्थान के आद्य (प्रथम) भजनोपदेशक–पं0 कालूराम रामगढ़ वाले

रामगढ़ (सीकर) निवासी पं कालूराम को प्रथम आर्य उपदेशक (राजस्थान) कह सकते हैं। वे 1836 में जन्मे और 1900 में दिवंगत हुए। उन्होने स्वप्न में ऋषि दयानन्द का उपदेश सुना और वैदिक धर्म का प्रचार करने का आदेश पाया। तब से वे राजस्थानी में भजन रचना कर विभिन्न स्थानों पर धर्म प्रचार करते मानव जीवन की क्षण भंगुरता पर उनका निम्न भजन मेरी परदादी (फतेहपुर शेखावरी) उसका नैहर था को याद था। उनके पुत्र देवीलाल जी (पितामह के अनुज) को शायद यह भजन उनकी माता ने सिखाया होगा । इन पितामह के मुख से हमने इसे कई बार सुना। यह भावनापूर्ण भजन मानव जीवन की नश्वरता का यथार्थ चित्र है–

मानव नहीं बिचारी रे लोभी नहीं विचारी रे।
थोरी म्हारी करता ऊमर बीती सारी रे।
रब दस मास गरम में राख्यो माता थारी रे।
अब तो बाहर कार भगती करसूं थारी रे।
बालपना तो खेल कूद में बीत्यो सारी रे।
जवानी रे जोर तिरिया लागे प्यारी रे।
अन्तिम– कालूराम गुरां हे सरणे सुधारी सारी रे।

पं. कालूराम के जन्म ग्राम में प्रतिवर्ष पौष पूर्णिमा पर पं. (महात्मा) कालूराम की स्मृति में एक विशाल मेला लगता है। इस स्थान पर एक कीर्तिस्तम्भ महालाजी द्वारा निर्मित ऊँचा तथा स्थापत्य का अद्वितीय नमूना हैं उनके निधन की 100 वीं जयन्ती जब स्वामी स्व. सुमेधानन्दजी (सांसद) की अध्यक्षता में मनाई गई थी। इन पंक्तियों के लेखक ने महात्मा जी के कृतित्व पर विस्तृत्व परिचय प्रस्तुत किया था। भारत के भूतपूर्व आडिटर जनरल तथा निर्यत्रक C.A.G. तथा कनाटक के भूतपूर्व राज्यपाल श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी समारोह के मुख्य अतिथि थे।

(3) कुँ. सुखलाल आर्य मुसाफिर की राष्ट्र उद्बोधन करी गजलें, भजन

नई पीढ़ी के लोग कुँ सुखलाल तथा उनकी राष्ट्र एवं धर्म को पुनरूजीवित करने वाली सरल उर्दू गजलों और शुद्ध हिन्दी में रचे भजनों को भूल गए हैं। बुलन्दशहर जिले के अरनियाँ ग्राम में 1890 में जन्मे कु. सुखलाल ने आगरा के मुसाफिर विद्यालय में उपदेशक का प्रशिक्षिण प्राप्त किया, आर्य मुसाफिर उपाधि प्राप्त की और पठानी प्रान्त उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त में प्रचारार्थ चले गए। अवस्था शायद 18 की रही होगी। किसी आपत्तिजनक समझे गए वाक्य के कारण जब मैजिस्ट्रेट ने पूछा–इतने दूर संयुक्त प्रान्त (यू. पी) से धर्म के प्रचारार्थ यहाँ खूँखार पठानों के प्रदेश मे क्यों आए? क्या वहाँ वैदिक धर्म का प्रचार नहीं कर सकते थे? उत्तर में निर्भीक आर्य उपदेशक का उत्तर था–यदि आप हजारों मील का सफर कर यहाँ हमारे देश पर शासन करने आ सकते हैं तो मैं अपने ही देश के इस प्रान्त में स्वधर्म प्रचारार्थ क्यों नहीं आ सकता? समझदार अंग्रेज दण्ड नायक ने नौजवान आर्य से आगे बहस नही की।

इन्हीं सुखलाल के राष्ट्रीय भावों से ओत–प्रोत प्रवचनों का सुनकर महात्मा जी ने मध्यप्रदेश विधानसभा के स्पीकर श्री धनश्यामसिंह गुप्त से पूछा था– गुप्ता जी यह आपका सुखलाल तो कमाल का बोलता है। सुखलाल जी स्वतंत्रता आन्दोलत में कारावास भोग चुके थे। मुझे उनके भजन–प्रवचन सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। वे एक ईश्वर भजन से अपना प्रवचन आरम्भ करते और उसके पश्चात उनका धारा प्रवाह ओजस्वी भाषण हो जाता जो अस्खलित वाणी में घण्टे–डेढ़ घण्टे तक चलता और श्रोता मंत्र मुग्ध होकर सुनते। तभी तो यह प्रसिद्ध था कि आर्यसमाज (बच्छोवाली तथा अनारकली) लाहौर के मंत्री को जनता से कहना पड़ता–अन्त में कुं. सुखलाल के भजन होंगे। इस कथन मात्र से सुनने वाले सभा समाप्त होने तक, चाहे रात के 12 ही क्यों न बज जाए) सभा का त्याग नहीं करते।

अब सुधाकर तुल्य अमृत वर्षा करने वाले कुँ. साहब की कुछ मार्मिक उक्तियाँ सुनें–

(खिदमते धरम (वतन) में जो कि मर जाएँगे।
वो अमर नाम अपना दुनिया में कर जाएँगे।
न ये पूछे कि मरकर किधर जाएँगे।
वो जिधर भेज देगा उधर जाएँगे।
(क्योंकि परमात्मा की न्याय व्यवस्था में पूरा यकीन है)
(शुद्धि आन्दोलन से घबराए तास्सुबी मुल्ला–मौलवियों को लक्ष्य कर–
आप दिखला रहे हैं किसे तुर्शियां (गरम क्यों हो रहे हैं–मौलाना)
ये नरो वो नहीं जो उतर जाएँगे।
हिन्दुओं का अब क्या कर्तव्य है–
दीन दुखियों को छाती लगा लो अभी,
वर्ना ये लाल गैरों के घर जाएँगे।
और अन्त में–आप मानें न माने खुशी आपकी।
हम 'मुसाफिर' हैं कल अपने घर जाएँगे।
बलिदानियों को श्रद्धाञ्जलि
शीश जिनके धरम पर चढे हैं।
झण्डे दुनिया में उनके गड़े हैं।

3/5 शंकर कालोनी,
श्रीगंगानगर

ओ३म् का ध्वज ऊँचा रहे

● डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने वैदिक धर्म के प्रचार हेतु आर्य समाजों की स्थापना की। बम्बई में सर्वप्रथम सन् 1865 में प्रथम आर्य समाज स्थापित किया। सन् 1865 से 1883 तक लगभग 58 आर्य समाज स्थापित हो गए थे। ऋषि दयानन्द के बाद बम्बई आर्य समाज के उप प्रधान श्री सेवक लाल कृष्ण दास ने सम्पूर्ण भारत में जहाँ जहाँ आर्य समाज स्थापित हो चुके थे वहाँ वहाँ पत्र प्रेषित कर भारत वर्ष में सर्वोपरि एक प्रधान आर्य समाज बनाने का आग्रह किया था तब सर्व प्रथम पंजाब के आर्य समाजों ने मिलकर पंजाब का केन्द्रीय संगठन सन् 1885 में 'आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब' बनाया तत् पश्चात् अन्य प्रातों में प्रान्तीय सभा स्थापित हो गई। सन् 1909 को एक केन्द्रीय संगठन 'सार्वदेशिक भाषा' बना जो कि प्रतिनिधि सभाओं का केन्द्रीय संगठन था।

जब ये सभाएँ बन रहीं थीं आर्य समाज स्थापित हो रहे थे उस समय भारत में वेद प्रचार की धूम मच रही थी। आर्य समाज ग्राम–ग्राम में नगर–नगर में द्वार–द्वार पर जाकर वेद की दुन्दुभि बजाते थे। उस समय चहुँ ओर घरों पर भवनों पर कोठियों, हवेलियों पर ओ३म् ध्वज लहराते दिखते थे। कोई विरला ही नगर व ग्राम ऐसा होता था जहाँ आर्य समाज की शोभा यात्रा न निकलती हो। गलियों चौबारों मेलों आदि में लोग वेद के गीत गुनगुनाते फिरते थे। वह समय वेद प्रकाश का स्वर्णिम काल था।

महर्षि के तीन शिष्यों ने तो चारों ओर वेद प्रचार कार्य आँधी की भाँति किया था स्वामी आत्मानन्द, स्वामी ईश्वरानन्द तथा स्वामी सहजानन्द ने ऋषि दयानन्द से संन्यास की दीक्षा ली थी।

उस समय अंग्रेजी शासन तो था ही, अंग्रेजी मिशनरियाँ स्थान–स्थान पर कार्य कर रही थीं व ईसाई मत का पूरे जोर शोर से प्रचार कर रही थीं उन्हें अंग्रेज सरकार का पूर्ण समर्थन प्राप्त था धन आदि की सहायता भी प्राप्त थी ऐसी मिशनरियों को ईसाई मत के प्रचार प्रसार की खुली छूट थी यह हिन्दू मत की कमियों, अन्ध–विश्वासों, पाखण्डों का सहारा लेकर भोले हिन्दू युवक युवतियों को बपतिस्मा दे रहे थे। अधिकांशतः पुराणों की बात कहकर हिन्दूओं पर कटाक्ष किया करते थे ऐसे में आर्य समाज के सदस्य ईसाई इस्लाम, वामपन्थी व पौराणिकों के जो अन्ध विश्वास व पाखण्ड थे जो इन मत मतान्तरों में कुरीतियाँ व्याप्त थीं उन पर कटाक्ष करते थे हिन्दुओं को पाखण्डों के प्रति सचेत करते थे जाग्रत करते थे उस समय उपदेशकों को वेतन नहीं मिलता था न वेतन भोगी होते थे आर्य समाज के सभासद वेद प्रचार करना अपना कर्तव्य समझते थे और स्थान स्थान पर शास्त्रार्थ किया करते थे खण्डन मण्डन करते थे भजनोपदेश किया करते थे।

रीजनरेटर ऑफ आर्यावर्त ने इस विषय में कई बार तथ्यों को प्रकाशित किया और बताया कि जो बालक मिशन स्कूलों में पढ़ते हैं उनके लिए इस बीमारी से बचे रहना संभव नहीं– बचपन से जो भाव छोटे बालकों में भर दिए जायेंगे वह जीवन भर बने रहेंगे। उस समय क्रिश्चिएनिटी के विद्यालय जो ईसाई मिशनरियों द्वारा खुल

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

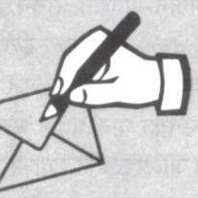

पत्र/कविता

शाबाश पीके! जब अपनी ही खिड़की टूटी हो, क्यूँ दोष दें झांकने वालों को?

सुब्रहमण्यं स्वामी की शंकाओं को जायज मानते हुए भी मैं आडवानी जी के विचारों से सहमत हूँ कि 'पी के फिल्म हमारे पाखंडों और अंधविश्वसों की असलियत को उजागर करने वाली एक साहस पूर्ण प्रशंसनीय और पूर्ण मनोरंजक फिल्म है।'

मुझे याद है, तब मैं बच्चा ही था। मेरी माँ कुछ पड़ोसियों के संग पूजा की थाली ले–लेकर अपने गांव से एक कोस दूर मनिचक्र मंदिर में किसी विशेष त्योहार पर सज–धजकर पूजा करने जा रही थी। पीछे–पीछे मैं भी चल रहा था। आधे रास्ते में ही ठेंस लगने से श्रद्धा फुआ की थाली गिर गयी थी। दूध, जल, फल, फूल, बेलपत्र, सिंदूर, चावल, बतासा आदि वहीं बिखर गये थे। वह अपशगुन मानकर रोने लगी। मेरी माँ समझाई–इसमें कोई बात नहीं, हम सब की थाली से ही तुम भी पूजा कर लेना। अभी सड़क पर बिखरे इन सामानों को किनारे उस टीले के पास रख दो, ताकि किसी के पैर न लगे।'

फिर जब दो–तीन घंटा के बाद हम लोग मंदिर से पूजा करके, लकठो और तेलही जलेबी का प्रसाद खाकर लौट रहे थे तो देख रहे हैं कि श्रद्धा फुआ की थाली जहाँ गिरी थी, वहाँ पीछे से आने वाली अन्य स्त्रियाँ बैठ कर पूजा कर रही हैं। पूछने पर वे सब पूरे विश्वास के साथ बोलीं–'मनिचक्र मंदिर में जाने से पहले रुक कर यहाँ भी थोड़ा–बहुत पूजन किया ही जाता है।' जैसा देख–सुन कर हम सब हंसने लगे।

इसी तरह 'ढेला फेंकवा बाबा', गोरैया बाबा, भैरों बाबा, बैताली बाबा जैसे नामों से आज भी अनेकों मानव–निर्मित भगवान पूजे जाते हैं और फिर फेंक भी दिये जाते हैं। हास्यास्पद निर्मल बाबा के कहने पर लाखों लोग अभी–अभी अपने घर से शिवलिंग फेंकने लगे हैं। इसी तरह संतोषी माता पूर्णतः काल्पनिक और पैट्रो–डालर प्रायोजित फिल्मी देवी हैं। मानव निर्मित इन देवताओं से पुरोहितों और प्रबंधकों को मनमाना मुनाफा और सम्मान मिलता है तथा धर्म के नाम पर मूर्ख बनाना और मूर्ख बनाना सर्वाधिक सरल और संतोषप्रद भी है।

बेशक 'हिंदूधर्म' महान और सर्वोत्तम है, किंतु 'हिंदू समाज' में आस्था के नाम पर अंधास्था के बादल वैदिक–सत्य के सूर्य को ढँक दिया है। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद, नानक–कबीर–सा कोई सत्यार्थी जब इसका पर्दाफाश करने लगता है तब सत्य–विमुखी लोगों को तीता लगने ही लगता हैं जबकि सत्य का प्रभाव सदा मधुर शिव और सुंदर ही होता है

हिंदुओं की आंखें खोलने वाली ऐसी पुरस्कृत्य फिल्म के विरोध में रामदेव बाबा जैसे विचारवान सुप्रतिष्ठित संत को चुप ही रहना चाहिये था। सच्चे हिंदू नेताओं को इस फिल्म पर विरोध नहीं, विचार (आत्मचिंतन) करना चाहिये।

आर्य गिरि, निंगा
आसनसोल. (प. बं.)

****

सरस्वती वन्दना

पावका नः सरस्वती।।

अज्ञान–तिमिर विनाशिनी, सदा जगत् प्रकाशिनी।
जीवन–प्रदायिनी ऊर्जस्वती, पावका नः सरस्वती।। 1।।

सरस्वती अर्थात् वेदवाणी (वेदविद्या) हमें पवित्र करे। अज्ञानान्धकार का नाश करने वाली, समस्त संसार को सदा ही ज्ञान के आलोक से आलोकित करने वाली, शक्ति एवं उत्साह से युक्त, जीवन प्रदान करने वाली वेदवाणी हमें पवित्र करे।

स्वस्तिपथ–प्रदर्शिका, सदैव लोकहित–साधिका।
सद्ज्ञान–पूरिता तेजस्वती, पावका नः सरस्वती।। 2।।

कल्याणकारी, मार्गदर्शक, हमेशा लोगों का भला करने वाली, सद्ज्ञान से परिपूर्ण, तेजयुक्त वेदवाणी हमें पवित्र करे।

प्रणवे स्थिता दुरितहारिणी, दुःखनिवारिणी कीर्तिकारिणी।
जाड्यं हरति स्वस्तिमती, पावका नः सरस्वती।। 3।।

एक ओंकार ईश्वर में विद्यमान, दुर्गुण हरने वाली, दुःख दूर करने वाली, कल्याणकारी वेदवाणी मूर्खता–जड़ता–आलस्य को हर लेती है। इन गुणों से सम्पन्न वेदवाणी हमें पवित्र करे।

ज्ञानेन पूरयत्यनुचरम्, पावयति मनश्च हृदयम्।
मातेव रक्षति पयस्वती, पावका नः सरस्वती।। 4।।

वेदवाणी अपने अनुचरों (उपासकों) को ज्ञान से परिपूर्ण कर देती है। मन और हृदय को पवित्र करती है। दुग्ध–जल–शक्ति एवं मधुरता से सम्पन्न माता के समान रक्षा करती है। ऐसी पवित्र वेदवाणी हमें पवित्र करे।

सुमेधां मे ददातु भगवती, करोतु मंगल में वर्चस्वती।
नमोऽस्तु ते यशोमति! पावका नः सरस्वती।। 5।।

ऐश्वर्यशालिनी वेदवाणी हमें सद्बुद्धि प्रदान करे। तेज–कान्ति–शक्ति से युक्त वेदवाणी हमारा कल्याण करे। हे यशपूर्ण वेदवाणी! हम सभी आपको सम्मानपूर्वक धारण करते हैं। यह वेदवाणी हमें पवित्र करती रहे।

रचयिता – वेद प्रकाश शास्त्री
शास्त्री भवन, 4–E, कैलाश नगर
फाजिल्का–152123

ऐसे लोगों को कृतघ्न एवं सत्यद्रोही क्यों न कहा जाय

कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण होता है, साहित्य में वही प्रतिविम्बित होता है जो तत्कालीन समाज में रहता है। संस्कृत साहित्य में ताला एवं तलाक के लिए कोई शब्द नहीं मिलता है क्योंकि तत्कालीन समाज में ताला का उपयोग नहीं था और तलाक भी नहीं होता था। इसी प्रकार रामायण कालीन साहित्य वाल्मीकीय रामायण में विमान शब्द की उपस्थिति एवं वर्णन इस बात का प्रमाण है कि उस समय विमान बनता था एवं उपयोग में लाया जाता था। उस समय 'पुष्पक विमान' सबसे प्रचलित विमान था। यह विमान कुबेर का था और रावण ने उससे बलपूर्वक छीन लिया था। उसके मरने के बाद श्री राम उसी विमान से अयोध्या लौटे थे। इसके साथ ही तत्कालीन ऋषि भारद्वाज ने **'यंत्र सर्वस्वम्'** नामक चालीस अध्याय की एक पुस्तक लिखा था जिसका वैमानिक अध्याय आज 'वृहद् विमान शास्त्र' के नाम से प्रकाशित है। 1988 में बंगलोर में विश्व अंतरिक्ष सम्मेलन में इसी विमान शास्त्र का वर्णन इटली के वैज्ञानिक डॉ. रॉबर्ट पिनौति ने प्रस्तुत किया था, तो भारत के वैज्ञानिकों को बड़ा आश्चर्य हुआ था। यह भी तथ्य है कि वर्त्तमान में 17 दिसम्बर–1903 ई को सअसे पहले राइट बंधुओं ने अकाश में विमान उड़ाया था, जबकि इससे तैंतीस वर्ष पूर्व लगभग1870 में म. दयानंद ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में विमान पर एक अध्याय लिखकर विमान की आधिकारिक घोषणा की थी। उस समय यूरोपीय बुद्धिजीवी वर्ग ने विमान बनाने की घोषणा पर म. दयानन्द को पागल साधु करार दिया था, लेकिन तब देश पराधीन था। लेकिन जब आज स्वतंत्र भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने विज्ञान–कांग्रेस में प्राचीन भारतीय विमान एवं विज्ञान की चर्चा की ,तो भी मार्क्स एवं मैकाले के भारतीय मानस –पुत्रों के पेट में दर्द होने लगा और कहने लगे कि प्रधान मंत्री विज्ञान के नाम पर अंधविश्वास को बढ़ावा दे रहे हैं। ऐसे लोगों को यदि कृतघ्न एवं सत्य–द्रोही न कहा जाय तों और क्या कहा जाय जिन्हें अपने देश की धरोहर पर गर्व नही है।

सूर्य देव चौधरी
झारखंड रा.आ. प्रति सभा राँची–1
मो. – 09470587322

****

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 04 का शेष

ईश्वर दर्शनों ...

है। वह शक्ति अति सूक्ष्म है। इन्द्रियों के द्वारा उसका ग्रहण किया ही नहीं जा सकता तथा इन्द्रियों के द्वारा उसकी अनुपलब्धि उसके अभाव का साधक नहीं मानी जा सकती। पुनरपि योगियों को अबाह्य (=आन्तरिक) प्रत्यक्ष से तो वह उपलब्ध, प्रत्यक्ष या प्रतीत होती है–

"सौक्ष्म्यात्तदनुलब्धिः"

– सांख्यदर्शन– 1/74

सूक्ष्म की उपलब्धि उसके कार्य देखने से होती है। उसकी प्रतीती तथा अनुभव हो जाने के पश्चात उसका अभाव नहीं कहा जा सकता है।

"कार्यदर्शनात् तदुपलब्धेः"

–सांख्यदर्शन 1/75

महान् आधुनिक वैज्ञानिक न्यूटन के अभिप्रेरणा नियम (Law of Motion) के साथ संसार की व्यवस्था को समझने की प्रक्रिया हमें अपनानी चाहिए, तब ईश्वर समझ में अधिक आएगा– "A body in a state of rest or of motion will continue in its state of rest or of motion untill an external force is applied अर्थात् कोई भी स्थिर पदार्थ तब तक अपनी स्थिर अवस्था में ही रहेगा जब तक किसी बाह्यबल से रोका न जाए।" उसका तात्पर्य यह हुआ कि किसी शक्ति की पहचान कार्यों से, गति से, क्रियाओं से होती है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भी एक विस्तृत पदार्थ है, Body है। इसमें गति को देखिए, जानिए व पहचानिए। आपको एक शक्ति का आभास होगा। सूर्य भी गति कर रहा है, पृथ्वी भी गति कर रही है। नदियाँ गति कर रही हैं। पुष्प उगते हैं, उनमें सुगन्धि कौन भर रहा है? फिर कौन कर रहा है? वह ईश्वर ही है। बिना देखे उसके अस्तित्व पर विश्वास तुम नहीं करते तो बताओ– "क्या अपने–आप को कभी देखा है?"

"नहीं।"

"तुम एक आत्मा हो व शरीर में हो रही विभिन्न क्रियाओं को देखकर–जानकर ही तुम्हें जानने वाले सभी व्यक्ति यह विश्वास किए रहते है कि तुम हो। क्या इस तथ्य से सहमत हो?"

"हाँ, मैं सहमत हूँ।"

"अभी तुम बोल रहे हो, देख रहे हो, साँस आ जा रहा है। यदि अभी ये क्रियाएँ बन्द हो जाएँ तो तुम्हारा पुत्र ही कहेगा कि मेरे पिता जी नहीं रहे। अब तुम्हारा शव घर में रहा है जो पहले दिखाई देता था। वह अब भी दिखाई दे रहा है परन्तु सब कह रहे हैं कि तुम नहीं रहे। शरीर, जिसका अन्त्येष्टि कर्म अभी नहीं किया गया, उसकी विद्यमानता में भी लोग क्यों नहीं मान रहे कि तुम अब भी हो? इसी शरीर को तो पहले भी देखते थे तो कहते थे कि तुम हो। अब इसे देखकर क्यों नहीं मानते?"

"आप ही समझाइएगा"

"यह शरीर साधन है, निराकार आत्मा का। इसकी क्रियाशीलता अपनी नहीं है। आत्मा की है। आत्मा के बिना शरीर निष्क्रिय व व्यर्थ है। मुख्य वस्तु तो आत्मा ही है।

यदि बिना देखे आत्मा को मानते हो तो बिना ईश्वर को देखे क्यों नहीं मानते कि ईश्वर भी है?"

"जो क्रियाएँ आप ईश्वर की बता रहे हैं, वे उन पदार्थों की उत्पत्ति की स्वाभाविक क्रियाएँ हैं, न कि ईश्वर की हैं।"

"महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है कि जो स्वाभाव से जगत् की उत्पत्ति हो तो विनाश कभी न होगा और विनाश भी स्वभाव से मानो तो उत्पत्ति कभी न होगी और जो दोनों स्वभाव युगपत् द्रव्यों में मानो तो उत्पत्ति व विनाश की व्यवस्था कभी न हो सकेगी। यदि स्वभाव से ही उत्पन्न होता है तो इस भूगोल के निकट में दूसरा भूगोल, चन्द्र, सूर्य आदि उत्पन्न क्यों नहीं होते और जिस–2 के योग से जो–जो उत्पन्न होता है, वह–वह ईश्वर से उत्पन्न किए हुए बीज, अन्न, जल आदि के संयोग से घास, वृक्ष और कृमि आदि उत्पन्न होते हैं, बिना उसके नहीं। जैसे हल्दी, चूना और नींबू का रस दूर–दूर देश से आकर स्वयं नहीं मिलते। किसी के मिलाने से ही मिलते हैं। उसमें भी यथायोग्य मिलाने से 'रोरी' होती है। अधिक–न्यून अन्यथा करने से रोरी नहीं होती, वैसे ही प्रकृति परमाणुओं का ज्ञान और युक्ति से परमेश्वर के मिलाए बिना जड़ पदार्थ स्वयं कुछ भी कार्य सिद्धि के लिए विशेष पदार्थ नहीं बन सकते। इसलिए स्वभाव से सृष्टि नहीं होती (न चलती है) परमेश्वर की रचना से ही होती (व चलती है)। –सत्यार्थ प्रकाश, पहला समु.

हमारा एक प्रश्न है उनसे, जो कहते हैं कि स्वभाव है पदार्थों का मिलना, कि लोहे से बने कुछ टुकड़े अपने–आप उठकर परस्पर मिल जाने चाहिए थे तथा रेल के पहिए बन जाने चाहिए इन्हें उठाकर कारखाने में ले जाना पड़ता है तथा एक मिस्त्री अपनी बुद्धि, अपने हाथ तथा अन्य भौतिक साधनों का प्रयोग करके ही पहिए बनाएगा। इससे सिद्ध होता है कि पदार्थों में अपनी कोई व्यवस्था नहीं होती, बुद्धि भी नहीं है तथा न ही गति है। इसके बिना बन जाना असम्भव है।

ईश्वर के अस्तित्व विषयक कुछ भ्रान्तियों का निराकरण करने के पश्चात् हम प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि वह सबको सद्बुद्धि दे ताकि सब लोग उसको सही रूप में जानें व उसकी कृपा से पूर्णतः लाभान्वित हो सकें।

चूना भट्ठियां,
सिटी सैन्टर के निकट,
यमुनापार–135001 (हरियाणा)

☞ पृष्ठ 09 का शेष

ओ३म् का ध्वज...

रहे थे वह ईसाई मत के प्रचार के केन्द्र थे।

वेद प्रचारकों ने इस भयानक स्थिति का सामना किया और आर्य समाजों द्वारा अपने विद्यालय खोले जाने लगे आर्य उपदेशक नगर, ग्राम, गली मोहल्लों में ईसाई मत का खण्डन करने लगे जिससे भारत के नौनिहालों बालकों को ईसाईकरण की छाप लगने से बचाया जा सके।

यही नहीं कि आर्य समाज का कार्य सरल था आर्यसमाजियों ने सीने पर लाठियाँ खाईं, गोलियाँ खाईं, शहीद हुए, अनेक कष्ट भी सहे, हैदराबाद आन्दोलन, श्रद्धानन्द, दयानन्द, पं. लेखराम के बलिदान को कौन नहीं जानता उस समय वेद प्रचार का कार्य उपदेशकों सभासदों द्वारा तो हो ही रहा था अनेक पत्र पत्रिकाओं का भी सराहनीय योगदान रहा सन् 1866 से अलीगढ़ में 'भारतबन्धु' शाहजहाँपुर से आर्य भूषण सन् 1860 में आर्य दर्पण, सन् 1878 में फर्रुखाबाद से भारत सुदशा प्रवर्तक, मेरठ से 1878 में आर्य समाचार तथा प्रयाग में देश हितैषी जैसी पत्रिकाएँ निकलनी आरम्भ हो गई थी।

नगर व ग्रामवासी उस समय वैदिक धर्म के प्रति जागरूक हो रहे थे अन्य मत मतान्तरों विशेषतः ईसाई मिशनरियाँ के कार्यों के इस मिशन से धक्का लगा और हिन्दुओं में जागरूकता आने लगी उपदेशकों की वाणी में तेज व ओज था उनका समझाने का माध्यम भजन व उपदेश थे सरलता से प्रत्येक बात को समझाते थे वैदिक धर्म का जो शुद्ध रूप था उसे बताते थे। ईश्वर एक है, वह अजन्मा है, सच्चिदानन्द स्वरूप है, सर्व शक्तिमान है, सर्वव्यापक है। वेद ईश्वरीय है अन्य नहीं। श्राद्ध जीवित का करना चाहिए। मूर्तिपूजा वेदानुसार नहीं है। संसार को चलाने वाला ईश्वर ही है। साथ में भारत के प्राचीन गौरव व वैभव को बताते थे। इससे हिन्दुओं में जो हीन भावना थी वह दूर होती थी क्योंकि ईसाई मिशनरियाँ हिन्दुओं को उनके पाखण्ड व कुरीतियों को बता कर मन में हीन भावना भर रही थीं। आर्योपदेश से वह हीनता की कालिमा जाती थी।

यही नहीं कि आर्य समाज का कार्य सरल था आर्यसमाजियों ने सीने पर लाठियाँ खाईं, गोलियाँ खाईं, शहीद हुए, अनेक कष्ट भी सहे, हैदराबाद आन्दोलन, श्रद्धानन्द, दयानन्द, पं. लेखराम के बलिदान को कौन नहीं जानता उस समय वेद प्रचार का कार्य उपदेशकों सभासदों द्वारा तो हो ही रहा था अनेक पत्र पत्रिकाओं का भी सराहनीय योगदान रहा सन् 1866 से अलीगढ़ में 'भारतबन्धु' शाहजहाँपुर से आर्य भूषण सन् 1860 में आर्य दर्पण, सन् 1878 में फर्रुखाबाद से भारत सुदशा प्रवर्तक, मेरठ से 1878 में आर्य समाचार तथा प्रयाग में देश हितैषी जैसी पत्रिकाएँ निकलनी आरम्भ हो गई थी।

आर्यों द्वारा आर्य समाजों में समस्त पर्व, आर्यो के बलिदान दिवस, जन्मोत्सव पर वेदप्रचार कार्य, शोभा यात्राएँ बड़ी धूमधाम से निकाली जाती थीं। उनमें उत्साह व हर्ष की लहर होती थी। भावना व श्रद्धा होती थी। वे आर्य शास्त्रों सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, गोकरुणानिधि, आर्याभिनव को बडे, प्रेम से पढ़ा करते थे स्वाध्याय शील होते थे।

विडम्बना यह है कि समय का चक्र चलता रहता है। देश को स्वाधीनता मिली। आज से कुछ समय पूर्व तक वेद प्रचार धूमधाम से होते थे महात्मा अमर स्वामी, महात्मा हंसराज, पं. लेखराम, गुरुदत्त, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. प्रकाशवीर शास्त्री, कुँवर सुखलाल जैसे महान क्रान्तिकारियों ने वेद का डंका खूब बजाया चारों ओर बजा मोरीशस सूरीनाम और नैरोबी, अफ्रीका तथा आज अमेरिका जैसे देशों में भी आर्य समाज स्थापित हैं। आज स्थिति बदल चुकी है। आज कहीं ग्राम व नगर में जाएँ तो नई पीढ़ी यह कहती मिल जाएगी कि हमारे दादा दादी, नाना व हमारे बुजुर्ग आर्य समाजी थे परन्तु हम नहीं हैं, क्योंकि वह किसी गुरुडम की शरण में आ गए हैं। कारण यह है कि अनेक आर्य समाज आज अनेक छद्मचर लोगों के शिकार हो रहे हैं। जहाँ कार्यक्रमों की मात्र खाना पूर्ति की जाती है। अनेक स्थानों पर मुकदमे चल रहे हैं ताले बन्द हैं। संस्थाओं विद्यालयों को धनार्जन का माध्यम बना लिया है। आर्यसमाजों में अनेक स्थानों पर भ्रष्टाचार का बोलबाला है ऐसे में ऋषि का कार्य कैसे हो सकता है। कैसे घर–घर पर ओ३म् ध्वज लहरा सकते हैं। कैसे शोभायात्रा निकल सकती है। ऋषि भक्तों को संगठित हो इस ओर ध्यान देना चाहिए जिनमें वेद की पताका पुनः घर घर लहराए।

गली नं. 2 चन्द्र लोक कालोनी, खुर्जा
मो. 8979794715

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 25-26/2/2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डी.ए.वी. पाँवटा साहिब ने निकाली स्वच्छ भारत अभियान रैली

डी.ए.वी. सिमौर पब्लिक स्कूल पांटवा ने एक भव्य स्वच्छ भारत रैली का आयोजन किया। इस अवसर पर एसडीएम श्रवण मांटा, नगर पालिका अध्यक्ष संजय सिंघल, हि.प्र. व्यापार मंडल के प्रदेश अध्यक्ष, मदन लाल खुराना, पार्षद श्रीमती रेणु डोगरी, श्रीमती युदेश, प्रमोद शर्मा, एन.पी.एस. सहोता एवं अन्य गणमान्य हस्तियों के साथ समस्त प्रशासनिक अधिकारी मौजूद थे जिन्होंने पांवटा वासियों से स्वच्छता के प्रति सजग रहने की अपील की।

नगरपालिका अध्यक्ष संजय सिंघल ने ध्वज फहराकर रैली को रवाना किया। इस विशाल रैली में उपरोक्त गणमान्यों के अतिरिक्त प्रधानाचार्य डॉ. वह.के. लवानिया, समस्त स्टाफ सहित करीब 500 बच्चे शामिल हुए। यह रैली स्कूल परिसर से शुरू होकर विश्वकर्मा मन्दिर चौक मेल बाजार होते हुए नगर पालिका मैदान पहुँची जहाँ पर एसडीएम श्रवण मांटा ने इस अभियान की महत्ता के विषय में अपने विचार व्यक्त किए।

डी.ए.वी. के बच्चों एवं स्टाफ ने वार्ड नं 9 के घर-घर में जाकर लोगों से स्वच्छता अपनाने पर जोर दिया तथा एक प्रश्नावली भी प्रत्येक घर से भरवाई। इस प्रकार सभी रोगों में ''क्या करें'' एवं ''क्या न करें'' के विषय में भी पत्रिकाएं बाँटी।

स्कूल के प्रधानाचार्य डॉ. वी. के. लवानिया ने इस राष्ट्रव्यापी अभियान में हिस्सा बनने पर गर्व व्यक्त करते हुए कहा कि डी.ए.वी संस्थान इस प्रकार के कार्यक्रम भविष्य में भी आयोजित करता रहेगा।

डी.ए.वी. एन.आई.टी में श्रद्धानन्द को स्मरण किया गया

डी.ए.वी. एन.आई टी. कैम्पस आदित्यपुर में स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान दिवस धूमधाम से मनाया गया। प्रातः विद्यालय के धर्माचार्य श्री धर्म प्रकाश शास्त्री एवं श्री नागेन्द्र कुमार झा के नेतृत्व यज्ञ-हवन किया गया जिसमें विद्यालय के सभी छात्रों एवं शिक्षक-शिक्षिकाओं ने श्रद्धापूर्वक भाग लिया। यज्ञोपरान्त स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन के उपर भाषण, भजन, कविता एवं प्रश्नोत्तरी का आयोजन किया गया जिसमें विद्यालय के छात्र-छात्राओं ने बढ़-चढ़कर भाग जिया। श्री धर्मप्रकाश शास्त्री ने देशभक्ति भजन के द्वारा स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन से परिचय करवाया। कक्षा नौवीं के छात्र शिवांक वर्मा ने अपने प्रवचन में स्वामी जी को राष्ट्र भक्त एवं निर्भीक संन्यासी बताया। विद्यालय के प्रभारी प्राचार्या श्री बी.एस.चौधरी एवं वरिष्ठ अध्यापक श्री संजीव शुक्ला ने भी स्वामी श्रद्धानन्द जी को श्रद्धाञ्जलि देते हुए उनके पर चिह्नों पर चलने की प्रेरणा दी। शांतिपाठ एवं प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. इंटरनैशनल, अमृतसर में सी.बी. एस ई. विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल, अमृतसर में तीन दिवसीय सी. बी.एस.ई विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन किया गया।

विज्ञान प्रदर्शनी का शुभारंभ सांस्कृतिक कार्यक्रम के साथ हुआ। इस अवसर पर श्री राजेश शर्मा, एस.डी. एम. अमृतसर-II, मुख्य अतिथि थे। विद्यालय के चेयरमैन माननीय डॉ. वी. पी. लखनपाल, विद्यालय के प्रबंधक डॉ. राजेश कुमार, एडवोकेट श्री सुदर्शन कपूर जी इस अवसर पर विशेष रूप से उपस्थित थे।

समारोह का शुभारंभ दीप प्रज्ज्वलित करके किया गया। प्रिंसीपल अंजना गुप्ता ने अतिथिगणों का स्वागत पुष्प गुच्छे भेंट करके किया।

विद्यालय के छात्र-छात्राओं दवारा डी.ए.वी. शैक्षिक संस्थाओं की महत्ता को प्रस्तुत करता गीत 'डी.ए.वी. गान' प्रस्तुत किया गया।

इस विज्ञान प्रदर्शनी में जम्मू-कश्मीर एवं पंजाब राज्यों के सी.बी.एस.ई. विद्यालयों के लगभग 100 विद्यार्थियों ने विभिन्न विषयों-सामाजिक स्वास्थ्य एवं वातावरण, यातायात, व्यर्थ पदार्थों का सदुपयोग, प्राकृतिक संसाधनों की उपयोगिता एवं सरंक्षण पर अपनी परियोजनाएं प्रदर्शित कीं।

मुख्य अतिथि श्री राजेश शर्मा जी ने उपस्थित जनों को संबोधित करते हुए कहा कि सी.बी.एस.ई द्वारा इस प्रकार की विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन करने का मुख्य उद्दकश्य भावी वैज्ञानिकों की खोज करना ही है। विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत परियोजनाएं उनकी योग्यता की परिचायक हैं।

विद्यालय के प्रबंधक डॉ. राजेश कुमार ने उपस्थितजनों को धन्यवाद दिया। डॉ. जतिंद्र सिंह, डॉ. सरोज अरोड़ा, डॉ. संदीप शर्मा अमन महाजन, डॉ. सपना सेठी, डॉ. परमजीत सिंह ने निर्णय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

विद्यालयों के विद्यार्थियों ने इस प्रदर्शनी का अवलोकन किया। विज्ञान प्रदर्शनी के समापन समारोह अवसर पर श्री रवि भगत, डिप्टी कमीश्नर, अमृतसर मुख्य अतिथि थे।

मुख्य अतिथि भगत ने उपस्थिति को संबोधित करते हुए प्रदर्शनी की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने कहा कि विज्ञान में रुचि रखने वाले के विद्यार्थी कल के वैज्ञानिक भी हो सकते हैं।

प्रिंसीपल अंजना गुप्ता ने सी.बी.एस.ई. का आभार व्यक्त किया कि यह महत्वपूर्ण इस अवसर विद्यालय को प्रदान किया।

इस प्रदर्शनी में 10 सर्वश्रेष्ठ परियोजनाएं चुनी गईं निकेतन कान्वेंट स्कूल-तरनतारन कर चुनी गई। चयनित सभी दस परियोजनाएं राष्ट्र स्तरीय प्रतियोगिता में प्रस्तुत की जाएंगी।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए एस.के शर्मा द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601 सम्पादक – पूनम सूरी